निवेदन

"आत्मा की मुक्ति का क्या उपाय है ?" यह एक विश्वव्यापी तथा सनातन प्रश्न है। संसार के नाशवान सुख-दुखों की अपेक्षा निर्बाध तथा अनन्त सुख की खोज में मानवात्मा सदैव से भटकती रही है। इस संसार में भी किस प्रकार अधिकाधिक सुख शान्ति पूर्वक जीवन व्यतीत किया जा सकता है यह प्रश्न भी साथ ही संलग्न है। जैन दर्शन में उक्त प्रश्नों का उत्तर बड़े विस्तार तथा वैज्ञानिक रूप से दिया गया है। जैनागम के वृहत भंडार में इन्हीं प्रश्नों का उत्तर भरा पड़ा है। उसी वृहत ज्ञान समुद्र का सार आचार्य श्रीमद् उमास्वामी (समय दूसरी शताब्दी) ने 'तत्वार्थ सूत्र' में गागर में सागर के समान संजो दिया है। इसी कारण इसे मोक्ष शास्त्र भी कहते हैं।

इसके प्रथम सूत्र 'सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणिमोक्षमार्ग.' में ही मोक्ष का मार्ग दर्शाया गया है। अर्थात सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान और सम्यक चारित्र मिल कर ही मोक्ष के मार्ग हैं। दूसरे सूत्र में बताया गया है कि तत्वों का श्रद्धान ही सम्यक् दर्शन है। चौथे सूत्र में जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्वों का निर्देश है। ग्रंथ के दस अध्यायों के ३५७ सूत्रों में इन्हीं सात तत्वों का क्रमशः विस्तृत वर्णन है। प्रथम चार अध्यायों में जीव तत्व का, पाँचवें अध्याय में अजीव तत्व का, छठे और सातवें अध्याय में आस्रव तत्व का, आठवें अध्याय में बंध तत्व का, नवें अध्याय में संवर और निर्जरा तत्व का तथा दसवें अध्याय में मोक्ष तत्व का वर्णन है।

जिस प्रकार वेद, बाइबिल तथा कुरान आदि अन्य धर्मों के प्रमुख ग्रंथ हैं उसी प्रकार 'तत्वार्थ सूत्र' भी जैन साहित्य का प्रमुख पूज्य ग्रन्थ है। जैन धर्मावलम्बियों के दोनों सम्प्रदायों में इस ग्रंथ की समान रूप से मान्यता तथा आदर है। दोनों सम्प्रदायों के मान्य आचार्यों ने इस पर महत्वपूर्ण टीकाएँ लिखी हैं। संस्कृत भाषा में होने के कारण हर व्यक्ति उनको समझ नहीं पाता। हिन्दी गद्य

मैं भी इसकी अनेक टीकाएँ [illegible] है। [illegible] कठस्थ होता है। तथा [illegible] बह गद्य में नहीं आ पाता। [illegible] पाठ करने के उपरान्त [illegible] हाने का एक विशिष्ट ही आनन्द है। [illegible] सूत्र [illegible] मन्त हिन्दी में पद्य उद्धरण [illegible] अधिक प्रभावोत्पादक बना [illegible] तत्त्वार्थ सूत्र के सूत्रों को सरल [illegible] भावना उत्पन्न हुई। [illegible] टीकाओं की सहायता से सूत्रों [illegible] हिन्दी [illegible] देने का प्रयास किया है। [illegible] रूप में भी दी गई है, [illegible] प्रत्येक सूत्र की व्याख्या में पुस्तक [illegible]

पहले मेरे मन में प्रत्येक सूत्र [illegible] करने का विचार आया। कुछ सूत्रों [illegible] मोक्ष मार्ग का साधन [illegible] सम्यग्दर्शन [illegible] वस्तु स्वभाव [illegible] सम्यग्दर्शन [illegible] निज स्वभाव, [illegible]

परन्तु अधिकांश सूत्रों का भाव [illegible] कठिन था इस कारण अधिकांश सूत्रों का [illegible] दिया गया है। कुछ का पद्य [illegible] भी गया है।

[illegible] में सौभाग्यवश श्री [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] के विविध [illegible] पर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

तत्त्वार्थ सूत्र

की

विषय सूची

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

चौथा अध्याय

आठवाँ अध्याय

नवाँ अध्याय

दसवाँ अध्याय

"चौबीसी स्तुति"

(रचयिता : नन्दकिशोर जैन, एम० ए०)

तीर्थंकर चौबीस हमारे सुधि जिनकी भव पातक टारे ॥
आदि, अजित, सभव अभिनन्दन,
सुमति, पद्मप्रभु, करलो वदन ।
श्री सुपार्श्व, चन्दा प्रभु प्यारे ॥ तीर्थंकर० ॥
पुष्पदंत, शीतल, सुखकारी,
प्रभु, श्रेयांस की शोभा प्यारी ।
दुखियों के सब कष्ट निवारे ॥ तीर्थंकर० ॥
वासु पूज्य, पुनि विमल, अनंता,
धर्म, शान्ति, सोहैं भगवन्ता ।
आए हैं हम शरण तिहारे ॥ तीर्थंकर० ॥
कुंथनाथ जी, अरह यशस्वी,
मल्लिनाथ से महत तपस्वी ।
जिन तप कर अघ सारे जारे ॥ तीर्थंकर० ॥
मुनिसुव्रत, नमिनाथ हमारे,
नेमिनाथ जी राजुल प्यारे ।
मौर फेंक तप हेतु सिधारे ॥ तीर्थंकर० ॥
पार्श्वनाथ की छवि अति न्यारी,
शेषनाग करते रखवारी ।
वामा की आँखों के तारे ॥ तीर्थंकर० ॥
महावीर का यश अति भारी,
बालपने जिन दीक्षा धारी ।
त्रिशला माँ, सिद्धार्थ दुलारे ॥ तीर्थंकर० ॥
भक्ति भाव से जो नित ध्यावे,
जग का आवागमन मिटावे ।
क्यों नहिं नर-भव जनम सुधारे ॥ तीर्थंकर० ॥

तत्वार्थ सूत्र

मंगलाचरण

[illegible]र:—मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं [illegible]
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे [illegible]।

[illegible]हा :— कर्म रूप पर्वत [illegible]

मोक्ष मार्ग पुनि [illegible]

विश्व तत्त्व [illegible]

मोक्ष का मार्ग –

मूल – सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥

भाषा – सम्यक दर्शन गुण को मान।
पुनि उत्तम है सम्यक ज्ञान॥
सम्यक चारित्र पावें जान।
त्रय मिल मोक्ष मार्ग को थान॥१॥

सम्यग्दर्शन का लक्षण –

मूल – तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥

भाषा – वस्तु स्वभाव कहा तत्त्वार्थ।
उसको भविजन जानें सार्थ॥
ता पर होय अटल श्रद्धान।
सम्यक दर्शन सो ही मान॥२॥

सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति के भेद –

मूल :– तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥

भाषा :– उपजे दोहि प्रकार विशेष।
निज स्वभाव अरु पर उपदेश॥
निजहि स्वभाव 'निसर्गज' कहा।
नाम 'अधिगमज' दूजा लहा॥३॥

तत्वों के नाम :–

मूल :— जीवाजीवास्रव-बंध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्वम् ॥४॥

भाषा :— सात तत्व हैं–'जीव', 'अजीव'।
'आश्रव', 'बंध' जगत की नींव ॥
पंचम 'संवर' पुनि 'निर्जरा'।
सप्तम 'मोक्ष' महा सुख भरा ॥४॥

निक्षेपों के प्रकार :–

मूल :— नाम स्थापना द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः ॥५॥

भाषा :— लोक काज हित बिन गुणसार।
नाम निक्षेपण चार प्रकार ॥
'नाम', 'स्थापना', 'द्रव्य' निक्षेप।
सपर्याय 'भाव' निक्षेप ॥५॥

५ वें सूत्र का भावार्थ :–

सो चारों अब लीजे जान। जा सों हो सबकी पहिचान ॥
'नाम'-वीर रख दीजे कोय। आवश्यक नहिं गुण सो होय ॥
दो प्रकार 'थापना' बताए। 'तदाकार'जिन मूर्ति सुहाए ॥
घोड़े, हाथी, ऊँट विचार। शतरंज हि के 'अतदाकार' ॥
जिस पत्थर से प्रतिमा होय। कह दीजे यदि प्रतिमा सोय ॥
शक्ति परिणमन की बतलाए। सो ही 'द्रव्य' निक्षेप कहाए ॥
जैसा हो तस करहि बखान। इन्द्र कहे इन्द्रहि गुणखान ॥
वर्तमान कहिए पर्याय। सो ही 'भाव' निक्षेप कहाए ॥५॥

तत्त्वों को जानने का उपाय –

सूत्र – प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥

भाषा – जीव-अजीव पदारथ जोय ।
इनका ज्ञान करावें योय ॥
सकल वस्तु का ज्ञान 'प्रमाण' ।
एक देश 'नय' लीजे जान ॥६॥

जीव आदि तत्त्वों को जानने के अन्य सहायक उपाय :–

सूत्र – निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानतः ॥७॥

भाषा :–षट अनुयोग सहायक जान ।
पूर्ण वस्तु का होवे ज्ञान ॥
सत-श्रद्धान कहा 'निर्देश' ।
अरु 'स्वामित्व' न संशय लेश ॥
तीजा 'साधन' पुनि 'अधिकरण' ।
'स्थिति' ही है पंचम चरण ॥
षष्ट 'विधान' कहावे वही ।
भेद-प्रभेद बतावे सही ॥७॥

७ वें सूत्र का भावार्थ :–

अधिकारी 'स्वामित्व' बताए । सम्यकदर्शन जीव कहाए ॥
उत्पति हि कारण बतलाए । सो 'साधन' अनुयोग कहाए ॥
'अधिकरण' वस्तु आधार । 'स्थिति' कहिए काल विचार ।७।

जीवादि को जानने के कुछ और सहायक उपाय :—

मूल:—सत्संख्या-क्षेत्र-स्पर्शन कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥

भाषा :— सत', 'संख्या' अरु क्षेत्र' विचार ।
'स्पर्शन', 'काल' भेद उरधार ॥
'अन्तर', 'भाव' आदि अनुयोग ।
'अल्पबहुत्व' सु अष्ट प्रयोग ॥८॥

८ वें सूत्र की व्याख्या—

'सत' है जो अस्तित्व बताए । 'संख्या' गिनती भेद कहाए ॥
मिले जहाँ सो 'क्षेत्र' बखान । 'स्पर्शन' विचरण क्षेत्रहि जान ॥
'काल'—समय जानें सब कोय । विरह काल ही 'अन्तर' होय ॥
एक दशा तज दूजी लहे । पुनि पहली में आकर रहे ॥
औपशमिक आदिक त्रय 'भाव' । तुलना 'अल्पबहुत्व' बनाव ॥८॥

ज्ञान के भेद :—

मूल.—मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ॥९॥

भाषा :— ज्ञान कहे आगम में पंच ।
'मति','श्रुत','अवधि' न संशय रंच ॥
चौथा 'मन पर्यय' ही कहा ।
पंचम 'केवल' जिनवर लहा ॥६

पांचों ही ज्ञान ही प्रमाण हैं —

सूत्र —तत्प्रमाणे ॥१०॥

भाषा - सो ही पण ज्ञान परमान ।
इन्द्रिय ज्ञान मगनय जान ॥
सूक्ष्म वस्तु हो या अति दूर ।
इन्द्रिय किम जाने भरपूर ॥१०॥

पूर्वोक्त पांचों ज्ञानों में भेद —

सूत्र —आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥
प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥

भाषा — पर वश उपजें सो ही मान ।
दो परोक्ष हैं मति,श्रुत ज्ञान ॥११॥
अवधि आदि त्रय अतिम जोय ।
हैं प्रत्यक्ष कहावें सोय ॥१२॥

११ वें व १२ वें सूत्र का भावार्थ—

इन्द्रिय, मन, उपदेश सहाय । परवश सोइ परोक्ष कहाय ॥११॥
अक्ष नाम आतम का मान । ता सों ही प्रत्यक्ष बखान ॥
इन्द्रिय आदि सहाय न होय । आतम से ही उपजे सोय ॥१२॥

मतिज्ञान के नामान्तर :—

मूलः-मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्॥१३॥

भाषा :— पुनि नामान्तर हैं मतिज्ञान ।
'मति', 'स्मृति', 'संज्ञा', 'चिन्ता' मान ॥
साधन करे साध्य अनुमान ।
पंचम 'अभिनिबोध' सो जान ॥१३॥

१३ वें सूत्र का भावार्थ—

इन्द्रिय मनहि अवग्रह होय । रूप ग्रहण 'मति' कहिए सोय ॥
याद पुरानी 'स्मृति' कही । जब तब मन में आवे सही ॥
पूर्व वस्तु से करहि मिलान । जोड़ रूप सो 'संज्ञा' जान ॥
धूम देख कर अग्नि हि ज्ञान । तर्क सोइ 'चिन्ता' करि जान॥१३॥

मतिज्ञान किससे उत्पन्न होता है —

मूल :— तदिन्द्रियानिन्द्रिय-निमित्तम ॥१४॥

भाषा :— पंचेन्द्रिय अरु मन के मिले ।
मतिज्ञान आतम में खिले ॥१४॥

मतिज्ञान के भेद :—

मूल :—अवग्रहेहावाय धारणा. ॥१५॥

भाषा :— 'अवग्रह', 'ईहा' और 'अवाय' ।
भेद 'धारणा' सहित बताय ॥१५॥

१५ वें सूत्र की व्याख्या—

इन्द्रिय दर्शन पहले मान । तत्क्षण होय 'अवग्रह' जान ॥
इच्छा होवे ज्ञान विशेष । 'ईहा' सोइ अनिश्चय लेश ॥
ठीक वस्तु का निर्णय होय । भेद 'अवाय' कहावे सोय ॥
अविस्मरण 'धारणा' कहाय । मतिज्ञान चव भेद बताय ॥१५॥

श्रुतज्ञान के भेद -

मूल — श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥

भाषा — जो मतिज्ञान सहित श्रुतज्ञान।
ताके मुख्य भेद दो मान॥
'अंग बाह्य' कथनी बहु भेद।
'अंग प्रविष्ट' सु द्वादश भेद॥२०॥

२० वें सूत्र का भावार्थ —

जान प्रत्यक्ष केवल ज्ञान। दिव्यध्वनि उपदेश महान॥
गणधर द्वादश अंग बनाए। सो ही 'अंग प्रविष्ट' कहाए॥
सुगम पद्य जा हित आधार। सो ही 'अंग बाह्य' निरधार॥२०॥

भव प्रत्यय अवधिज्ञान के स्वामी —

मूल — भव प्रत्ययोऽवधिर्देव-नारकाणाम् ॥२१॥

भाषा — अवधिज्ञान दो भेद बताए।
प्रथम-सो 'भव प्रत्यय' कहलाए॥
देव नारकीयों को होय।
भव ही कारण कहिए सोय॥२१॥

२१ वें सूत्र का भावार्थ :—

आयु, नाम कर्मज पर्याय। आगम में सो भव कहलाए॥
देव, नारकी जन्में जीव। अवधिज्ञान जन्महि से होय॥२१॥

क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान के स्वामी :–

सूत्र :— क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥

भाषा :— है द्वितीय 'क्षयोपशमनिमित्त'।
पट प्रकार सुनिये घर चित्त॥
यह मनुष्य तिर्यंचन होय।
'गुण प्रत्यय' भी कहिए सोय॥२२॥

२२ वें सूत्र का भावार्थ :–

क्षय उपशम कारण हि प्रधान। भव नहिं, सो गुण प्रत्यय जान॥
स्वामि जीव सँग जावे जोए। 'अनुगामी' हाँ कहिए सोए॥
सग साथ नहिं जीवहि जाय। सोइ 'अननुगामी' कहलाए॥
परिणामहि विशुद्धि वश जान। 'वर्धमान' नित प्रति सो मान॥
कारण सक्लेशित परिणाम। 'हीयमान' घट आठो याम॥
घट-बढ़ बिन जो एक समान। ताहि 'अवस्थित' कहते जान॥
जामें जब तब घट बढ़ होय। अवधिज्ञान 'अनवस्थित' सोय॥२२॥

मनः पर्यय ज्ञान के भेद :–

सूत्र :— ऋजु-विपुलमती मनः पर्ययः ॥२३॥

भाषा :— मन पर्यय के भी दो काम।
'ऋजुमति' और 'विपुलमति' नाम॥२३॥

२३ वें सूत्र का भावार्थ :–

सरल रूप मे पर मन जोय। ज्ञान ताहि का 'ऋजुमति' होय॥
सरल, जटिल सबही का ज्ञान। ता का नाम 'विपुलमति' जान।२३

[illegible]

[illegible]

अ.प्र – अवधिज्ञान का भेद बताए ।
प्रथम जो 'भव प्रत्यय' कहलाए ।।
देव नारकीयों को होय ।
भव ही कारण कहिए सोय ।।२१।।

२१ व सूत्र का भावार्थ –

आयु, नाम कर्मेन पाये । जिनमें जो भव कहलाए ।।
देव, नारकी जन्म जीव । अवधिज्ञान जन्मादि से होय ।।२१।।

क्षयोपशमनिमित्तक अवधिज्ञान के स्वामी :-

सूत्र :— क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥

भाषा :— है द्वितीय 'क्षयोपशमनिमित्त' ।
षट प्रकार सुनिय धर चित्त ॥
यह मनुष्य तिर्यंचन होय ।
'गुण प्रत्यय' भी कहिए सोय ॥२२॥

२२ वें सूत्र का भावार्थ :-

क्षय उपशम कारण हि प्रधान । भव नहिं, सो गुण प्रत्यय जान॥
स्वामि जीव संग जावे जोए । 'अनुगामी' हो कहिए सोए ॥
संग साथ नहिं जीवहि जाय । सोइ 'अननुगामी' कहलाए ॥
परिणामहि विशुद्धि वश जान । 'वर्धमान' नित प्रति सो मान ॥
कारण संक्लेशित परिणाम । 'हीयमान' घट आठो याम ॥
घट-बढ़ बिन जो एक समान । ताहि 'अवस्थित' कहते जान ॥
जामें जब तब घट बढ़ होय । अवधिज्ञान 'अनवस्थित' सोय॥२२॥

मनः पर्यय ज्ञान के भेद :-

सूल :— ऋजु विपुलमती मनः पर्ययः ॥२३॥

भाषा :— मन पर्यय के भी दो काम ।
'ऋजुमति' और 'विपुलमति' नाम ॥२३॥

२३ वें सूत्र का भावार्थ :-

सरल रूप में पर मन जोय । ज्ञान ताहि सो 'ऋजुमति' होय ॥
सरल, जटिल सबही का ज्ञान । ता का नाम 'विपुलमति' जान।२३।

मन पर्यय के दोनों भेदों में विशेषता –

सूत्र – विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥

भाषा – दोनों के दो भेद विशेष।
प्रथम 'विशुद्धि' न संशय लेश॥
ज्ञान आवरण हटतो कहे।
'अप्रतिपात' सो संयम रहे॥२४॥

अवधिज्ञान और मन पर्यय ज्ञान में अंतर –

सूत्र –विशुद्धि-क्षत्र-स्वामि विषयेभ्योऽवधि-मन पर्ययर्योः ।२५।

भाषा – अवधि और मन पर्यय ज्ञान।
चार अपेक्षा अंतर जान॥
प्रथम 'विशुद्धि', 'क्षेत्र' पुनि कहा।
'स्वामी', 'विषय' भेद का रहा॥२५॥

२५ वे सूत्र का भावार्थ :–

सूक्ष्मपने मे अन्तर मान। आगम ताहि 'विशुद्धि' बखान॥
'क्षेत्र' होय अन्तर स्थान। 'स्वामी' सो किनको हो जान॥
सैनी पचेन्द्रिय गति चार। तिनके अवधिज्ञान चितधार॥
कर्म भूमि के मानव मान। कुछ मे ही मन पर्यय ज्ञान॥
ज्ञान कौन वस्तु का होय। 'विषय' भेद ही कहिए सोय॥२५॥

नय के भेद :—

मूल :- नैगम-सग्रहव्यवहार-र्जुसूत्रशब्द-समभिरूढैवभूतानयाः।३३।

भाषा :— 'नैगम', 'संग्रह', अरु 'व्यवहार'।
नय आगम में विविध प्रकार ॥
'समभिरूढ़', 'ऋजु सूत्र' व शब्द ।
'एवंभूत' सप्त उपलब्ध ॥३३॥

३३ वें सूत्र का भावार्थ :—

हर पदार्थ मे धर्म अनेक । ज्ञान नयों से हो प्रत्येक ॥
भूत, भविष्यति जो पर्याय । वर्तमान में सो बतलाय ॥
रखकर ईंधन, पानी, धान । कहे पकाता भोजन पान ॥
आगे जो है बनना मान । पूर्ण रूप दे 'नैगम' जान ॥
एक कहे पूरा समुदाय । या उसकी विभिन्न पर्याय ॥
द्रव्य कहे सब द्रव्यहि जान । सैन्य कहे कुल सैन्य बखान ॥
सग्रह रूप ज्ञान मे आए । सो ही 'संग्रह' नय कहलाए ॥
संग्रह वश नहिं पूर्ण विचार । भेद-प्रभेद करे 'व्यवहार' ॥
भूत, भविष्यत को तज देय । वर्तमान पर्यायहि लेय ॥
एक समय इक ही पर्याय । मनुष्यायुपर्यन्त कहाए ॥
ग्रहण दृश्य पर्यायहि जान । सो नय ही 'ऋजुसूत्र' बखान ॥
संख्या, लिंग आदि व्यभिचार । दूर 'शब्द' से हो चितधार ॥
क्रियां, पुरुष, कालादिक भेद । से अर्थों में होय प्रभेद ॥
अर्थ भेद हो बिन व्यभिचार । एक वस्तु में कई प्रकार ॥

एक साथ कितने ज्ञान हो सकते हैं –

मूल :– एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥३०

भाषा :– ज्ञान जीव में निम्न प्रकार ।
एक होय या क्रमशः चार ॥
एक होय तब केवल ज्ञान ।
दो सँग हों बस मति श्रुत ज्ञान ॥
तीन होंय मति श्रुत सँग लेख ।
अवधि, मनः पर्यय में एक ॥
चार साथ हों 'केवल' छोड़ ।
और न कोई नूतन जोड़ ॥३०॥

तीन मिथ्याज्ञान :–

मूल :– मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥

भाषा :– मति, श्रुत, अवधि विपर्यय सहित ।
तीन ज्ञान करते हैं अहित ॥
कुमति, कुश्रुत आदिक त्रय नाम ।
अहित रूप हो तिनके काम ॥३१॥

मिथ्याज्ञान किस प्रकार अहित करते है :–

मूल :– सदसतोरविशेषाद्य दृच्छोपलब्धे रुन्मत्तवत ॥३२॥

भाषा :– सत अरु असत न कर पहिचान ।
मिथ्यादृष्टि भ्रमित-मति-ज्ञान ॥
सो उन्मत्त पुरुष की नाय ।
वस्तु ग्रहण में निज रुचि लाय ॥३२॥

नय के भेद :—

मूल :- नैगम-संग्रहव्यवहार-र्जुसूत्रशब्द-समभिरूढैवंभूतानया ।३३।

भाषा :— 'नैगम', 'संग्रह', अरु 'व्यवहार' ।
नय आगम में विविध प्रकार ॥
'समभिरूढ़', 'ऋजु सूत्र' व शब्द ।
'एवंभूत' सप्त उपलब्ध ॥३३॥

३३ वें सूत्र का भावार्थ :—

हर पदार्थ में धर्म अनेक । ज्ञान नयों से हो प्रत्येक ॥
भूत, भविष्यति जो पर्याय । वर्तमान में सो बतलाय ॥
रखकर ईंधन, पानी, धान । कहे पकाता भोजन पान ॥
आगे जो हैं बनना मान । पूर्ण रूप दे 'नैगम' जान ॥
एक कहे पूरा समुदाय । या उसकी विभिन्न पर्याय ॥
द्रव्य कहे सब द्रव्यहि जान । सैन्य कहे कुल सैन्य बखान ॥
संग्रह रूप ज्ञान में आए । सो ही 'संग्रह' नय कहलाए ॥
संग्रह वश नहिं पूर्ण विचार । भेद-प्रभेद करे 'व्यवहार' ॥
भूत, भविष्यत को तज देय । वर्तमान पर्यायहि लेय ॥
एक समय इक ही पर्याय । मनुष्यायुपर्यन्त कहाए ॥
ग्रहण दृश्य पर्यायहि जान । सो नय ही 'ऋजुसूत्र' बखान ॥
संख्या, लिंग आदि व्यभिचार । दूर 'शब्द' से हो चितधार ॥
क्रिया, पुरुष, कालादिक भेद । से अर्थों में होय प्रभेद ॥
अर्थ भेद हो बिन व्यभिचार । एक वस्तु में कई प्रकार ॥

इन भावों के भेद :—

मूल :— द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥

भाषा :— दो, नव, भेद प्रथम दो कहे।
तीजे के अठारह रहे ॥
इक्किस भेद 'औदयिक' भाव।
'परिणामिक' के त्रय मन लाव ॥२॥

औपशमिक भाव के दो भेद –

मूल :— सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥

भाषा :— उपशम कर्म प्रकृति जब सात।
'औपशमिक सम्यक्त्व' कहात ॥
उपशम मोहनीय सब मित्र।
कहते 'औपशमिक-चारित्र' ॥३॥

रे सूत्र की व्याख्या ~

न्तानुबन्धी' विक्षोभ। क्रोध, मान, माया अरु लोभ ॥
थ्यात्व हिं', 'सम्यक्मिथ्यात्व'।
अरु 'सम्यक्त्व' सहित सो सात ॥
प्रकृतियों के उपशमे। जो सम्यक्त्व आतम में जमे ॥
शमिक सम्यक्त्व बखान। भविजन मन कीजे श्रद्धान ॥
न्तानुबन्धी' इक जान। दूजी सोइ 'अप्रत्याख्यान' ॥
ी 'प्रत्याख्यान' बनाय। चौथी है 'संज्वलन' कषाय ॥
ध, मान, माया अरु लोभ। गुणन किए सोलह विक्षोभ ॥
कषाय पुनि नौ वितथार।
'हास्य' 'अरति' 'रति' 'शोक' विचार ॥
य' हिं, 'जुगुप्सा' हो मन खेद। 'स्त्री'-'पुरुष'-'नपुंसक' वेद ॥
थ्यात्व' हिं, 'सम्यक्मिथ्यात्व'।
अरु 'सम्यक्त्व' हि त्रय हो जात ॥
हनीय अट्ठाइस मित्र। उपशम 'औपशमिक चारित्र' ॥३॥

संज्ञी (अर्थात् मन सहित) जीव :—

मूल :— संज्ञिन. समनस्का: ॥२४॥

भाषा :— मन युत जो सो संज्ञी जान ।
बिन मन जीव असंज्ञी मान ॥२४॥

नया शरीर धारण हेतु जीव का गमन :—

मूल :— विग्रहगती कर्मयोग: ॥२५॥

भाषा :— कर्मयोग विग्रहगति गहे ।
तब नव कर्म जीव पुनि लहे ॥
मृत्यु थान से चय कर जाए ।
नूतन जन्म जगह में आए ॥२५॥

जीव और पुद्गलों के गमन का क्रम :—

मूल :— अनुश्रेणी गति: ॥२६॥

भाषा :— पुद्गल जीवादिक चितधार ।
गति होती श्रेणी अनुसार ॥२६॥

२६ वें सूत्र की व्याख्या :—

लोक मध्य से ऊपर जाय । नीचे या तिरछी दिश हाय ॥
नभ-प्रदेश की सीध कतार । श्रेणी कहलाती चितधार ॥२६॥

परलोक जाते समय संसारी जीव की गति :—

सूत्र :— विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥२८॥

भाषा :— गति संसारी जीवहि जान।
चार समय से पहले मान॥
जो नहिं होवे सीध अतीव।
मोड़ तीन तक लेवे जीव॥२८॥

बिन मोड़ की गति में समय :—

मूल :— एक समयाऽविग्रहा ॥२९॥

भाषा :— बिन मोड़ों की ऋतुगति लेख।
मात्र समय लगता है एक॥२९॥

विग्रहगति में आहारक और अनाहारक का नियम :—

मूल :— एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥३०॥

भाषा — विग्रह-गति जीवहि जब होय।
अन-आहारक कहिए सोय॥
इक-दो-तीन समय परिमान।
अधिकाधिक यह गति है जान॥
सीधा मार्ग जीव जब होय।
आहारक हो जावे सोय॥३०॥

३० वें सूत्र की व्याख्या :—

योग्य शरीरहि पुद्गल जान। ग्रहण करे जब जीव न मान॥
अनाहार सो ही चितधार। अन-आहारक जीव विचार॥३०॥

:— परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥

ा :— औदारिक तो है साकार।
सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः चार ॥३७॥

:—प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥

ा :— अधिकाधिक घनत्व सु जान।
असंख्यात गुने परमान॥
पहले से दूजे में कहे।
दूजे से आहारक लहे ॥३८॥

:— अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिघाते ॥४०॥

या :— हैं अनन्तगुन तैजस माँहि।
अन्तहु लो क्रम संशय नाहिं ॥३९॥
अप्रतिघाती अंतिम दोय।
अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

ाह पिंड मे अग्नि समान। घुस सकते सर्वत्रहिं जान ॥४०॥

तस और कार्मण शरीरों का आत्मा से संबंध :—

त्र :— अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

ाया :— तैजस और कार्मण दोय।
आतम से सम्बंधित सोय॥
आतम साथ सदा सु अनादि।
बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

एक जीव के एक साथ कितने शरीर हो सकते है :—

मूल :— तैदादीनि भज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥४३॥

भाषा :— जीव-शरीर सो निम्न प्रकार ।
द्वय हों या फिर क्रम से चार ॥
'तैजस', 'कार्मण' विग्रहगती ।
औदारिक युत आगे गती ॥
चार तभी हों सुनिए नेक ।
'आहारक', 'वैक्रियिक' में एक ॥
एक साथ नहिं पंच शरीर ।
निर्विवाद गुनिए धर धीर ॥४३॥

मूल :— निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

भाषा :— श्रंय शरीर प्रथमहिं उपभोग ।
अंतिम द्वय में नाहिं सुयोग ॥४४॥

मूल :—गर्भ-सम्मूर्छनजमाद्यम्॥४५॥ औपपादिक वैक्रियिकम् ।४६

भाषा :— जन्मे गर्भ, सम्मूर्छन जोय ।
सो शरीर औदारिक होय ॥४५॥
जो शरीर जन्मे 'उपवाद' ।
होय वैक्रियिक बिन अपवाद ॥४६॥

मूल :— लब्धिप्रत्यय च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥

भाषा :—तप से उपजे लब्धि विशेष ।
तासों भी वैक्रियिक अशेष ॥४७॥
लब्धि सहित तैजस है दोय ।
कांति प्रदायक सबमें होय ॥
दूजा तप विशेष से लहे ।
शुभ अरु अशुभ भेद दो कहे ॥४८॥

मूल :— पर पर सूक्ष्मम् ॥३७॥

भाषा :— औदारिक तो है साकार ।
सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः चार ॥३७॥

मूल :—प्रदेशतोऽसख्येयगुण प्राक् तैजसात् ॥३८॥

भाषा :— अधिकाधिक्य घनत्व सु जान् ।
असंख्यात गुने परमान् ॥
पहले से दूजे में कहे ।
दूजे से आहारक लहे ॥३८॥

मूल :— अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिघाते ॥४०॥

भाषा :— हैं अनन्तगुन तैजस माँहि ।
अन्तहु सो क्रम संशय नाहिं ॥३९॥
अप्रतिघाती अंतिम दोय ।
अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

लोह पिंड में अग्नि समान । घुस सकते सर्वत्रहिं जान ॥४०॥

तैजस और कार्मण शरीरों का आत्मा से सबंध :—

मूल :— अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

भाषा :— तैजस और कार्मण दोय ।
आतम से सम्बंधित सोय ॥
आतम साथ सदा सु अनादि ।
बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

तैजस कार्मण सब जीवों के होते हैं :—

मूल :— सर्वस्य ॥४२॥

भाषा :— तैजस कार्मण अंतिम दोय ।
सब संसारी जीवहिं होय ॥४२॥

एक जीव के एक साथ कितने शरीर हो सकते हैं :—

:— तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना चतुर्भ्यः ॥४३॥

ा :— जीव-शरीर सो निम्न प्रकार ।
द्वय हों या फिर क्रम से चार ॥
'तैजस', कार्मण' विग्रहगती ।
औदारिक युत आगे गती ॥
चार तभी हों सुनिए नेक ।
'आहारक', 'वैक्रियिक' में एक ॥
एक साथ नहिं पंच शरीर ।
निर्विवाद गुनिए धर धीर ॥४३॥

:— निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥

ा :— त्रय शरीर प्रथमहिं उपभोग ।
अंतिम द्वय में नाहिं सुयोग ॥४४॥

:—गर्भ-सम्मूर्छनजमाद्यम्॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ।४६

ा :— जन्मे गर्भ, सम्मूर्छन जोय ।
सो शरीर औदारिक होय ॥४५॥
जो शरीर जन्मे 'उपवाद' ।
होय वैक्रियिक बिन अपवाद ॥४६॥

:— लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥

ा :—तप से उपजे लब्धि विशेष ।
तासों भी वैक्रियिक अशेष ॥४७॥
लब्धि सहित तैजस हैं दोय ।
कांति प्रदायक सबमें होय ॥
दूजा तप विशेष से लहे ।
शुभ अरु अशुभ भेद दो कहे ॥४८॥

मूल :— परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥

भाषा :— औदारिक सो है साकार ।
सूक्ष्म, सूक्ष्मतर क्रमशः धार ॥३७॥

मूल :—प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥

भाषा :— अधिकाधिक घनत्व सु जान् ।
असंख्यात गुने परमान् ॥
पहले से दूजे में कहे ।
दूजे से आहारक लहे ॥३८॥

मूल :— अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतिघाते ॥४०॥

भाषा :— हैं अनन्तगुन तैजस माँहि ।
अन्तहु सो क्रम संशय नाहि ॥३९॥
अप्रतिघाती अंतिम दोय ।
अग जग रोक सके ना कोय ॥४०॥

लौह पिंड में अग्नि समान । घुस सकते सर्वत्रहि जान ॥४०॥

तैजस और कार्मण शरीरों का आत्मा से सबंध :—

मूल :— अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥

भाषा :— तैजस और कार्मण दोय ।
आतम से सम्बंधित सोय ॥
आतम साथ सदा सु अनादि ।
बंध निर्जरा नय सों सादि ॥४१॥

तैजस कार्मण सब जीवों के होते है :—

मूल :— सर्वस्य ॥४२॥

भाषा :— तैजस कार्मण अंतिम दोय ।
सब संसारी जीवहिं होय ॥४२॥

तृतीय अध्याय

इस अध्याय में अधोलोक तथा मध्यलोक का वर्णन किया गया है।

मूल :—रत्नशर्कराबालुकापङ्क धूमतमोमहातमः प्रभा भूमयो
घनाम्बुवाताकाश प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥१॥

भाषा :— अधोलोक का वर्णन सुनो।
सप्त भूमियाँ नीचे गुनो ॥
'रत्न', 'शर्करा' पहली दोय।
त्रय 'बालुका', 'पंक' चव होय ॥
'धूम', 'तमः' आगे विस्तार।
सप्तम 'महातमः' चितधार ॥
नाम समान प्रभा सब लहैं।
ताते रत्न–प्रभादिक कहैं ॥
'वलय-घनोदधिवात' अधार।
सो 'घनवात-वलय' आधार ॥
यह 'तनुवात-वलय' से घिरा।
अंत अनंताकाशहि निरा ॥१॥

१ ले सूत्र का विस्तार :—

इक लख असी योजन मान। रत्नप्रभा है मोटी जान ॥
कम से कम है आठ हजार। 'महातमः' क्रमशः चितधार ॥
एक राजु नीचे लोकान्त। निश्चय जानें भव्य प्रशांत ॥
मोटे योजन बीस हजार। तीनों वात-वलय चितधार ॥
मूंगा रंग घनोदधि जान। घनवातहिं गो-मूत्र समान ॥
वात-वलय-तनु अंतिम जोय। रंग अव्यक्तहिं ताका होय ॥

रत्नप्रभा आदि भूमियों मे नरकों की संख्या :—

मूल :—तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रि पंचोनैकनरक—
शतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमम् ॥२॥

भाषा — रत्न प्रभादिक में अब कहो।
नरकों की संख्या सुन सही ॥
तीस, पचीस, पन्दरह जान।
दस पुनि तीन सुक्रमशः मान ॥
गिनती सब लाखों में कही।
पँच कम लाख छठी में रही ॥
सप्तम में बस केवल पंच।
नरक होहि नहिं संशय रंच ॥२॥

नारकीयो का वर्णन: —

मूल .—नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः॥३॥

भाषा — देहादिक, लेश्या, परिणाम।
सबहि अशुभतर होते काम ॥
वेदन और अशुभ विक्रिया।
नारक जीव महादुख जिया ॥३॥

मूल :—परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥

भाषा:— देहिं परस्पर दुःख अपार।
आपस में ही विविध प्रकार ॥४॥

मूल :—संक्लिष्टासुरोदीरित दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥

भाषा :— तिन्हें लड़ावें पुनि सुन लेव ।
असुर कुमार कलह प्रिय देव ॥
तीजी पृथ्वी तक सो जाय ।
दुख देने के करहिं उपाय ॥५॥

नरकों की आयु :—

मूल :—तेष्वेक त्रि सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-
त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वाना परा स्थितिः ॥६॥

भाषा :— आयु नरक अब सुनिए सोय ।
इक, त्रय, सात प्रथम त्रय होय ॥
दस, सत्रह, बाइस क्रम जान ।
तेंतिस सागर अंतिम मान ॥६॥

६ ठे सूत्र का विस्तार :—

अधिकाधिक सो आयु बताए । कम से कम कहते समझाए ॥
दस हजार वर्षों की मान । रत्न प्रभा में होती जान ॥
अधिकाधिक पहले की जोय । आगे की कम से कम होय ॥
सख्या आयु निषेक अपार । ज्यों सागर मे जल विस्तार ॥
ताते ही दीर्घायु बखान । करते सागर उपमा जान ॥६॥

मध्य लोक का वर्णन —

मूल –जम्बू द्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः॥७॥

भाषा — अब भविजन दुक धरहु विवेक।
द्वीप अनेक, समुद्र अनेक॥
तिन सब ही के हैं शुभ नाम।
स्थित मध्यलोक सुखधाम॥
जम्बू द्वीप प्रथम चितधार।
नामहि जम्बू वृक्ष अधार॥
लवणोदधि घेरे है उसे।
ये ही क्रम आगे भी लसे॥७॥

द्वीप समुद्रों आदि का विस्तार :—

मूल .-द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः॥८॥

भाषा — क्रम से द्वीप समुद्र विचार।
दुगुन दुगुन जिनका विस्तार॥
घेरे चूड़ी के आकार।
जम्बू द्वीप मध्य चितधार॥८॥

८ वे सूत्र का विस्तार :—

घेरे जम्बू द्वीप विचार। लवणोदधि जलराशि अपार॥
खड-धातकी पुनि विख्यात। कालोदधि है ता पश्चात॥
जितने द्वीप समुद्रहि जान। आगे दोनों नाम समान॥
अंतिम द्वीप समुद्रहि जोय। नाम 'स्वयम्भूरमणहि' सोय॥
प्रथम द्वीप का जो विस्तार। ताते दूना उदधि विचार॥
दूना द्वीप उदधि सो होय। ता के आगे स्थित जोय॥८॥

द्वीप का कथन :—

—तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजन शतसहस्रविष्कम्भो
जम्बूद्वीप ॥९॥

:— गोल सूर्य सम जम्बू द्वीप।
मध्य मेरु गिरि मनहु महीप ॥
जम्बू द्वीप मध्य आकार।
एक लाख योजन विस्तार ॥९॥

द्वीप के सात क्षेत्र :—

:—भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षा
क्षेत्राणि ॥१०॥

:— सात क्षेत्र उसमें सुखधाम।
'भरत', 'हैमवत' आदिक नाम ॥
'हरि', 'विदेह', 'रम्यक' है पंच।
चित धरिए नहि संशय रंच ॥
षट 'हैरण्यवत' हि है कहा।
अरु 'ऐरावत' सप्तम रहा ॥१०॥

वें सूत्र का विस्तार :—

क्षेत्र उत्तर हिमवान। लवण समुद्र दिशा त्रय जान ॥
, सिन्धु नदी मनुहार। शोभित-भरतहि क्षेत्र मंझार ॥
विजयार्ध मध्य शोभाए। उत्तर-दक्षिण बनाए ॥
क्षेत्र षट भाग विशेष। प्रदेश ॥
करण का कारण मीत, के गीत ॥
विजय चक्री की बढ़ावे मान



निषध, नील पर्वत बिच जान । क्षेत्र विदेह अवस्थित मान ॥
कर्मनाश में तत्पर जान । मानव रहहिं विदेह समान ॥
ताते क्षेत्र विदेह कहाए । मध्यभाग गिरि मेरु सुहाए ॥
शत-सहस्र योजन विस्तार । ता में भूतल एक हजार ॥
मेरु गिरी पर हैं वन चार । 'भद्रशाल', 'नन्दन' बिनधार ॥
'सौमनस' हि पुनि 'पांडुक'जान । मेरु शिखर ता मध्य बखान ॥
चार शिला चव दिश मनुहार । तिन ऊपर सिंहासन चार ॥
तीर्थंकर अभिषेक कराएँ । देव मन हि मन में हर्षाएँ ॥
भविजन सो सक्षिप्त विचार । आगम मे पढ़िए विस्तार ॥१०॥

जम्बू द्वीप के सात क्षेत्रों का वर्णन करने वाले छः पर्वत :-
मूल .-तद्विभाजिनः पूर्वपरायता हिमवन्महाहिमवन्निपध-नील-
रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वता. ॥११॥

भाषा:— सप्त विभाग सकल सुख साज ।
सीमांकन करते गिरिराज ॥
पूरब से पश्चिम तक जात ।
नाम 'वर्षधर' भी विख्यात ॥
पहला पर्वत है 'हिमवान' ।
दूजा सोइ 'महाहिमवान' ॥
'निषध' 'नील' 'रुक्मी'पुनि कहा ।
'शिखरी' नाम छठे ने लहा ॥११॥

नदियों का वर्णन :—

सूत्र :—गङ्गासिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा नारीनरकांता-सुवर्णरूप्यकूला-रक्तारक्तोदा· सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥

भाषा :—सप्त क्षेत्र की नदियाँ सुनो ।
गंगा-सिन्धु प्रथम की गुनो ॥
दूजे की 'रोहित-रोहितास्य' ।
'हरित' सु 'हरिकान्ता' पुनि लास्य ॥
'सीता', 'सीतोदा' चय बहैं ।
'नारी' 'नरकांता' पँच लहैं
'स्वर्ण-रूप्यकूला' षट कहीं
'रक्ता-रक्तोदा' सत बहीं

इन तालाबों का विस्तार :—

मूल :—प्रथमो योजन सहस्रायामस्तदर्द्ध विष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥

भाषा:— लम्बाई ह्रद पद्म विचार ।
पूरव पश्चिम एक हजार ॥
उत्तर दक्षिण चौड़ा जान ।
पंच शतक योजन परमान ॥

मूल :—दश योजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजन पुष्करम् ॥१७॥

भाषा:— दस योजन सो गहरा कहा ।
बीच कमल इक योजन लहा ॥१६ व १७॥

ह्रदों और कमलों का आकार :—

मूल :—तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्रदा पुष्कराणि च ॥१८॥

भाषा:— कमल सरोवर आगे जोय ।
दुगुन दुगुन विस्तृत हैं सोय ॥१८॥

इन कमलों पर निवास करने वाली देवियाँ :—

मूल :—तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥१९॥

भाषा:— उन कमलों पर भव्य निवास ।
जिनमें छैं देविन के वास ॥
'श्री', 'ह्री', 'धृति' आदिक हैं नाम ।
'कीर्ति', 'बुद्धि', 'लक्ष्मी' सुखधाम ॥
एक पल्य की आयु लहैं ।
सामानिक, परिषद् संग रहैं ॥१९॥

मूल :–भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट् समयाभ्यामुत्सर्पिण्यव-
सर्पिणीभ्याम् ॥२७॥

भाषा :— भरतहिं, ऐरावतहिं विचार ।
आयु आदि घट बढ़ चितधार ॥
उत् अरु अवसर्पिणीनुसार ।
छै समयों में विविध प्रकार ॥२७॥

२७वें सूत्र की व्याख्या :—

सुख घटता ही जाए विचार । बढ़ता जावे दुःख अपार ॥
अवसर्पिणी काल सो जान । उत्सर्पिणी विलोमहि मान ॥
'सुखमा सुखमा' सुखमा' दोय । 'सुखमा-दुखमा' तीजा होय ॥
'दुखमा-सुखमा' चौथा जान । 'दुखमा' पंचम भेद बखान ॥
'दुखमा-दुखमा' अवसर्पिणी । इनके उल्टे उत्सर्पिणी ॥
इनमें सुख बढ़ता ही जाए । क्रमशः सब दुःख जाए विलाए
॥२७॥

शेष क्षेत्रों की दशा :—

मूल :—ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥

भाषा :— छोड़ भरत, ऐरावत मही ।
हानि वृद्धि नहिं होती कहीं ॥
एक समान दशा ही रहे ।

मूल :–चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता-गङ्गा सिन्ध्वादयो नद्यः॥२३॥

भाषा :— गंगा-सिन्धु नदी परिवार।
चौदह चौदह सोइ हजार॥
दुगुन-दुगुन आगे क्रम जान।
घेरे नदियाँ निश्चय मान॥२३॥

भारत क्षेत्र का वर्णन :—

मूल :–भरतः षड्विंशति-पञ्चयोजन-शत-विस्तारः
षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य॥२४॥

भाषा :— भरत क्षेत्र विस्तृत धर शीस।
योजन पंच शतक छब्बीस॥
कर योजन के उन्निस भाग।
योग करहु ता के छं भाग॥२४॥

मूल :–तद्-द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ता.॥२५॥

भाषा :— दक्षिण पर्वत क्षेत्र विचार।
क्रमशः दुगुन दुगुन विस्तार॥
सो क्रम है विदेह पर्यन्त।
संशय तनिक न मानें संत॥२५॥

मूल :–उत्तर दक्षिणतुल्याः॥२६॥

भाषा :— उत्तर के गिरि क्षेत्र विचार।
दक्षिण ही सम हैं विस्तार॥२६॥

धातकी खड द्वीप की रचना :—

मूल :—द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥

भाषा — क्षेत्र भरत आदिक हैं जोय ।
खंड-धातकी दो दो होंय ॥३३॥

पुष्कर द्वीप का वर्णन :—

मूल :—पुष्करार्धे च ॥३४॥

भाषा :— दो दो पर्वत द्वीप विचार
आधे पुष्कर द्वीप मंझार

आधे पुष्कर द्वीप में ही भरत आदि क्षेत्र क्यो

मूल :—प्राङ् मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥

भाषा :— कारण सो सुनिए धर ध्यान
मानुषोत्तर गिरि तक जान
मानव का ही है आवास
द्वीप-अढ़ाई करहिं निवास

मनुष्यों के दो भेद :—

मूल :—आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥

भाषा :— मानव के दो भेद बताए
प्रथम आर्य पुनि म्लेच्छ कहाए

भूमियों का वर्णन :–

–भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरु
॥३

ा :– पंच भरत, ऐरावत पंच।
पंच विदेह न संशय रंच॥
पंद्रह कर्मभूमियाँ कहीं।
छोड़ 'देव-उत्तरकुरु' मही॥३७॥

ष्यों की आयु :–

:–नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते॥३८॥

ा :– मानव आयु कही सो सुनो।
उत्कृष्ट अरु जघन्यतम गुनो॥
तीन पल्य अधिकाधिक जान।
अन्तर्मुहूर्त न्यूनतम मान॥३८॥

ञ्चों की स्थिति :–

:–तिर्यग्योनिजानां च॥३९॥

ा :– तिर्यञ्चों की स्थिति यही।
मानव की जो पहले कही॥३९॥

(तीसरा अध्याय समाप्त)

अध्याय

:—देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥

षा :— देवों के हैं चार निकाय ।

प्रथम 'भवनवासी' बतलाय ॥

'व्यन्तर'पुनि'ज्योतिष्क'सुहाय।

'वैमानिक' अंतिम कहलाय ॥१॥

सूत्र :–आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥

भाषा :— आदि देव त्रय, लेश्या भीत ।

कृष्ण, नील, कापोतहि, पीत ॥२॥

चार प्रकार के देवों के अवान्तर भेद :—

सूत्र :—दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥३॥

भाषा :— देव 'भवनवासी' दस कहे ।

आठ भेद 'व्यंतर' के रहे ॥

देव 'ज्योतिषी' पाँच प्रकार ।

'वैमानिक' बारह चितधार ॥

अंतिम कल्पोपन्न पर्यन्त ।

... अन्त ॥३॥

सोलह

देवो के विषय मे विशेष कथन :–

मूल –इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-परिषद्-आ
लानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिक

भाषा :— देवन भेद प्रत्येक निका
निम्न प्रकार कहे समझाय
'इन्द्र'ऋद्धि अणिमादिक यु
'सामानिक' आदर संयुक्त
'त्रायस्त्रिंश'प्रोहित सम जा
'परिषद' इन्द्र समासद मान
'आत्मरक्ष' पंचम सुखदा
रक्षा हेतु मनहु शोभाय
'लोकपाल'पट, सप्त 'अनीक
'प्रकीर्णक' पुरजन हि प्रतोष
'आभियोग्य' सेवक सम जा
'किल्विषिक'हि चांडाल सम

४थे सूत्र की व्याख्या :–

तेंतिम प्रोहित सम बतलाए। ता सों 'त्राय
करें धनादिक रक्षा जोय। 'लोकपाल'

पूर्व कथन में अपवाद :—

मूल :—त्रायस्त्रिंश लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्का. ॥५॥

भाषा :— 'व्यंतर', 'ज्योतिष्कहिं' नहिं होय ।
लोकपाल, त्रायस्त्रिंश दोय ॥५॥

इन्द्र का नियम :—

मूल :—पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥

भाषा :— प्रथम निकाय कहीं जो दोय ।
दो-दो इन्द्र दुहुन मा होय ॥६॥

बीस 'भवन-वासी' यो भये । सोलह इन्द्र सु 'व्यतर' लहे ॥६॥

देवों में कामेच्छा की पूर्ति :—

मूल :—काय प्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥

भाषा :— काम-भाव 'प्रविचार' बखान ।
प्रथम तीन देवन में मान ॥
साथ देव सौधर्मीशान ।
काय रमण मानव सम जान ॥७॥

मूल :—शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः प्रवीचाराः ॥८॥

भाषा :— क्रमशः सूक्ष्म लहें प्रविचार ।
शेष देव मों निम्न प्रकार ॥
स्पर्श, रूप, शब्दहिं, मन, लाय ।
शांत कामना सब हो जाय ॥८॥

८वें सूत्र की व्याख्या :—

स्वर्ग महेन्द्र हि सनतकुमार । आलिंगन ही है प्रविचार ॥
ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लांतव मान । अरु कापिष्ट स्वर्ग मे जान ॥
प्रविचारहिं का ढंग अनूप । शांत काम हो लख कर रूप ॥
शुक्र, महाशुक्रहिं, सातार । चौथा स्वर्ग कहा सहस्रार ॥
शांत कामना होती मीत । सुनकर मिष्ट वचन अरु गीत॥
आनत, प्राणत, आरण मान । चौथा अच्युत स्वर्ग बखान ॥
काम व्यथा सब ही मिट जाए । केवल मन में चिंतन लाए ॥
परम तुष्टि सब ही को होय । देविन के मन भावे सोय ॥८॥

मूल :—परेऽप्रविचाराः ॥९॥

भाषा :— सोलह स्वर्गों से जो परे ।
काम तिन्हें नहिं व्याकुलकरे ॥९॥

९वें सूत्र की व्याख्या :—

नौ ग्रैवेयक पहले मान । पुनि नौ अनुदिश आदिक जान ॥
पाँच अनुत्तर में भी सोय । काम वेदना तनिक न होय ॥
देविन का है पूर्ण अभाव । यों नहिं काम पूर्ण हो भाव ॥
काम अभावहिं कारण जान । परम सुखी हो देव बखान ॥९॥

भवनवासी देवों के दस भेद :—

मूल :—भवनवासिनोऽसुर-नाग-विद्युत-सुपर्णाग्नि-
वात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१०॥

भाषा :— भेद भवनवासी दस मान ।
'असुर', 'नाग' पुनि विद्युत जान ॥
षष्ठ 'सुपर्ण', पंच 'अग्निकुमार' ।
'वात','स्तनित','उदधि'चितधार॥
'द्वीप' अरु दिक्कुमार दस कहे ।
नाम कुमार सभी ने लहे ॥१०॥

१०वें सूत्र की व्याख्या :—

एक अवस्था में चितधार । रहहिं देव आजन्म कुमार ॥
देव भवनवासिन मे मान । सो गुण अधिकाधिक है जान ॥
रहन-सहन में पूर्ण कुमार । सोइ कुमार कहँ चितधार ॥
रत्नप्रभा पृथ्वी मनुहार । पङ्क बहुल में असुर कुमार ॥
देवन के हैं भवन ललाम । नौ के खर भागहि मे धाम ॥
भवनों में ही सो सब रहे । देव भवनवासी यों कहें ॥१०॥

व्यंतर देवों के आठ भेद :-

मूल —व्यन्तराः किन्नर-किम्पुरुष-महोरग-गंधर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥

भाषा :— व्यंतर रहहिं विभिन्न स्थान ।
आठ प्रकार सुनिश्चित जान ॥
'किन्नर', 'किम्पुरुष' हि हैं दोय ।
और 'महोरग' तीजा होय ॥
चव 'गंधर्व', 'यक्ष' ही पंच ।
'राक्षस', 'भूत','पिशाच'हि यंच ॥११॥

११वें सूत्र का विस्तार :-

भूतल पर भी करहिं निवास । ग्राम नगर चौराहा वास ॥
मंदिर, उद्यानादिक मान । मे भी 'व्यनर' रहते जान॥११॥

ज्योतिष्क देवों के भेद :-

मूल —ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ॥१२॥

भाषा :— 'ज्योतिष्क' हि के पाँच प्रकार ।
नाम चमक कारण चितधार ॥
'सूर्य' 'चन्द्रमा' 'ग्रह' 'नक्षत्र' ।
पंचम 'तारे' हैं सर्वत्र ॥१२॥

१२वें सूत्र का विस्तार :—

भू से तारे योजन मान । सात शतक और नब्बे जान ॥
सूर्य, चन्द्र, ग्रह आदिक जोय । ऊपर-ऊपर स्थित सोय ॥
एक शतक दस योजन माँहि । देव ज्योतिषी समाय नाहिं ॥
घात-वलय-घनउदधि मँझार । तक सो फैले हैं विस्तार ॥
सूर्य चन्द्र ही इन्द्र समान । ज्योतिष्क हिं देवों में जान ॥१२॥

सूत्र :—मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥

भाषा :— नित प्रदक्षिणा मेरुहिं करें ।
ढाई द्वीप का तामस हरें ॥१३॥

१३वें सूत्र की व्याख्या :—

ढाई द्वीप अरु सागर दोय । मानव लोक यहीं तक होय ॥
ता के देव ज्योतिषी जान । मेरु प्रदक्षिण दें नित मान ॥
ग्यारह सौ योजन रह दूर । दें प्रकाश मानव भरपूर ॥१३॥

सूत्र :—तत्कृतः काल विभागः ॥१४॥

भाषा :— ज्योतिष-देवन-गति आधार ।
काल विभाग किए व्यवहार ॥१४॥

१४वें सूत्र की व्याख्या :—

घंटा, मिनट, घड़ी, दिन, रात । व्यवहारहिं सो काल कहात ॥
बोध ताहि सों निश्चय काल । ता सुनिएगा आगे हाल ॥१४॥

मूल :—बहिरवस्थिताः ॥१५॥

भाषा :— मानव लोक परे गतिहीन ।

नाम 'अवस्थित' ताते दीन ॥१५॥

वैमानिक देवों का वर्णन :—

मूल :—वैमानिकाः ॥१६॥

कल्पोपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥

भाषा :— देव भेद वैमानिक मीत ।

'कल्पोपन्न' अरु 'कल्पातीत' ॥१६ व १७॥

१६वें तथा १७वें सूत्र की व्याख्या :—

पुण्यवान जेंह जीवहि जान । कहलावे सो जगह विमान ॥
जन्म तहाँ जो लेयें विचार । वैमानिक सो ही चितधार ॥
जिनमें रहना पुण्य सहाय । सो विमान त्रय भेद बताए ॥
मध्य इन्द्र सम 'इन्द्रक' जान । श्रेणिबद्ध कहूँ 'श्रेणि' विमान ॥
विदिशाओं में पुष्प समान । 'पुष्पप्रकीर्णक' बिखरे यान ॥
दस प्रकार इन्द्रादिक जोय । 'कल्पोपन्न' कहावें सोय ॥
सोलह स्वर्ग परे सुन लेव । सब 'अहमिन्द्र' कहावें देव
॥१६ व १७॥

मूल :—उपर्युपरि ॥१८॥

भाषा :— कल्प कहो या सोलह स्वर्ग ।

स्थित हैं क्रमशः अपवर्ग ॥१८॥

सोलह स्वर्गों का वर्णन :–

मूल :—सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर - लान्तव
कापिष्ट-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत - प्राणतयो-
रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्ता-
पराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥

भाषा :— सोलह स्वर्ग–प्रथम 'सौधर्म'।
पुनि 'ऐशान' गुनहु चित मर्म ॥
'सनत्कुमार' 'महेन्द्र' बताए।
'ब्रह्म' सु 'ब्रह्मोत्तर' सुखदाए ॥
सप्त 'लांतव', अष्ट 'कपिष्ठ'।
'शुक्र' 'महाशुक्र' हिं हैं इष्ट ॥
पुनि 'शतार' द्वादस 'सहस्रार'।
'आनत', 'प्राणत' आदि विचार ॥
'आरण', 'अच्युत' अंतिम मान।
क्रम से सोलह स्वर्ग सु जान ॥
ता पर नौ ग्रैवेयक कहें।
नौ अनुदिश आदिक भी रहें ॥
रहें 'विजय' 'वैजयन्त' 'जयंत'।
'अपराजित' चव मानें संत ॥
पुनि 'सर्वार्थसिद्धि' ही मान।
पंच विमान अनुत्तर जान ॥
वैमानिक तहँ करहिं निवास।
भाँति-भाँति सुख बिना प्रयास ॥१९॥

२२वें सूत्र की व्याख्या :—

तीव्र वैर, क्रोधादिक, क्लेश । लेश्या कृष्ण न संशय लेश ॥
माया, तृष्णादिक, अतिमान । नीलहिं लेश्या की पहिचान ॥
आत्म-प्रशंसादिक ही भाए । सो कपोत लेश्या कहलाए ॥
दया, दान, सत्यादिक मीत । लक्षण हैं सो लेश्या पीत ॥
क्षमा, दयादिक, सात्विक दान । पद्महि लेश्या लक्षण जान ॥
वीतराग, पर दोष भुलाए । शुक्लहि लेश्या सो कहलाए ॥
नाम कर्म वश रंग शरीर । द्रव्यहि लेश्या सो गुणधीर ॥
हों कषाय वश मन-वच-काय । भाव हि लेश्या सो कहलाए॥२२॥

कल्प किसे कहते हैं :—
मूल :—प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥

भाषा :— स्वर्गादिक ग्रैवेयक पूर्व ।
इन्द्र सहित सो 'कल्प' अपूर्व ॥२३॥

२३वें सूत्र का विस्तार :-

प्रथमहि से सोलह तक जान । स्वर्गों में ही इन्द्र बखान ॥
ग्रैवेयक, अनुदिश पुनि जाय । और अनुत्तर इन्द्र न होय ॥
सोलह स्वर्ग परे बतलाएँ । सबहि देव'अहमिन्द्र'कहाएँ ॥२३॥

लौकान्तिक देवों का वर्णन :–

मूल :–ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥२४॥

भाषा :— ब्रह्मलोक में रहते मान।
सौकान्तिक सो निश्चय जान॥
एक जन्म से मुक्ती लहें।
ताते ही लौकान्तिक कहें॥२४॥

लौकान्तिक देवो के भेद :–

मूल :—सारस्वतादित्य-वह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिता व्याबाधा-
रिष्टाश्च ॥२५॥

भाषा :— लौकान्तिक के सुनिए भेद।
ऊँच-नीच का नाहि विभेद॥
'सारस्वत', 'आदित्य' विचार।
'वह्नि' 'अरुण' क्रमशः चितधार॥
'गर्दतोय' पुनि 'तुषित' कहाय।
'अव्याबाध', 'अरिष्ट' सुहाय॥२५॥

२५वें सूत्र की व्याख्या :–

इन्द्रादिक के नाहि अधीन। विषय विरक्त देव स्वाधीन॥
ता सों ये देवर्षि कहाएँ। पाठी चौदह पूर्व बताएँ॥
सो वैराग्य समय सुखदाय। तीर्थंकर प्रतिबोधहि जाय॥
अधिकाधिक संख्या में मान। दो-दो क्रमशः जदपि समान॥
सात-सात सौ प्रथम महंत। ग्यारह सहसहि-ग्यारह अंत॥२५॥

द्वि चर्म देवो का वर्णन :-

मूल :-विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥

भाषा :— नौ अनुदिश, विजयादिक चार।
ता के देव 'द्वि चरम' विचार ॥२६॥

२६वें सूत्र की व्याख्या :-

विजयादिक से भूतल आएँ। पुनि सयम धर ऊपर जाएँ॥
पुन: वहाँ से नर भव धरें। मुक्ति रमा को तब जा वरे॥
दो मानव भव धरते मान। मोक्ष प्राप्त करते तब जान॥
पर सर्वार्थ सिद्धि के देव। एक चरम होते चित लेव॥२६॥

तिर्यञ्चों की पहिचान :-

मूल :-औपपादिकमनुष्येभ्य शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥

भाषा :— जन्मुपपाद नारकी, देव।
अरु मानव तजि शेषहिं लेव॥
जीव सोइ तिर्यञ्च हि मान।
सब लोकों में स्थित जान॥२७॥

देवों की आयु का वर्णन :—

मूल :—स्थितिरसुरनाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणा सागरोपम त्रिपल्योपमार्द्धहीनमिता ॥२८॥

भाषा :— आयु भवनवासिन की कही।
असुरकुमारिक सागर सही॥
नाग कुमारों की त्रय पल्य।
और सुपर्ण अढ़ाई पल्य॥
आयु पल्य दो द्वीप कुमार।
डेढ़ पल्य तक शेष विचार॥२८॥

सौधर्म और ऐशान स्वर्ग के देवों की आयु :—

सूत्र :—सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥२९॥

भाषा :— आयु स्वर्ग सौधर्मैशान ।
कुछ बढ़ दो सागर परमान ॥२९॥

क्रमशः आगे के स्वर्गों की आयु :—

सूत्र :—सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥

भाषा :— सानत्कुमार, महेन्द्र हि जान ।
सधिक अधिक सत सागर मान ॥३०॥

सूत्र :—त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभि-
रधिकानि तु ॥३१॥

भाषा :— योग सात में आयु विचार ।
द्वादश स्वर्ग शेष वितधार ॥
तीन, सात, नौ, ग्यारह जान ।
तेरह, पन्द्रह आगे मान ॥३१॥

३१वें सूत्र की व्याख्या :—

दो-दो स्वर्गों में [illegible] होय । दस, चौदह, सोलह कहि सोय ॥
अट्ठारह सागर श्रुति कही । [illegible] सब ही में रही ॥
अधिक मात्र का [illegible] इह ही बात ॥

कल्पातीत देवों की आयु :-

मूल :—आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥

भाषा :— नौ ग्रैवेयक आयु प्रसिद्ध ।
एक-एक सागर क्रम वृद्धि ॥
आरण, अच्युत से है कही ।
तेइस से इकतिस तक रही ॥
इक बढ़ है अनुदिश हि विमान ।
बतिस सागर सो ही जान ॥
विजयादिक चव में इक वृद्धि ।
तेतिस ही 'सर्वार्थ हि सिद्धि' ॥३२॥

वैमानिक देवों की जघन्य आयु :-

मूल :—अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥

भाषा :— आयु जघन्य स्वर्ग की जान ।
दुय बढ़ एक पल्य से मान ॥३३॥

मूल :—परतः परतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ॥३४॥

भाषा :— नीचे की अधिकाधिक आय ।
सो ऊपर कम से कम होय ॥३४॥

३४वें सूत्र की व्याख्या :-

दुय बढ़ दो सागर परमान । अधिकाधिक सौधर्म ऐशान ॥
सनत्कुमार माहेन्द्र मांय । देव आयु कम से कम होय ॥
[illegible] एक होय सु मान ॥३४॥

द्रव्यों के बारे मे विशेष कथन :—

मूल :—नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥

भाषा :— 'नित्य' 'अवस्थित' सब ही मान ।
पुद्गल छोड़ अरूपी जान ॥४॥

दो प्रकार गुण सब मे मान्य । प्रथम विशेष पुनः सामान्य
गुण विशेष गति होय सहाय । अस्तित्व हि सामान्य बताय
धर्म द्रव्य गुण सो चितधार । दो-दो सबमें इसी प्रकार
द्रव्य गुणों का नाश न होय । ता ते 'नित्य' कहावें सोय
छै सख्या नहि घट-बढ जान । द्रव्य 'अवस्थित' सो ही मान
पुद्गल रूपी, है गुण चार । अन्य अरूपी सब चितधार ॥४

पुद्गल द्रव्य रूपी हैं :—

मूल :–रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥

भाषा :— केवल पुद्गल रूपी कहे ।
रस-स्पर्श गंधादिक सहे ॥५॥

धर्मादि द्रव्य बहुत नही हैं –

मूल :–आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥

भाषा :— 'धर्म', 'अधर्म', 'अकाश' हि एक ।
तीन द्रव्य जो शेष–अनेक ॥६॥

पुद्गल, जीव अनन्तानन्त । असंख्यात अणु काल महंत
लोकाकाश असंख्य प्रदेश । हर पर स्थित कालाणु एक ॥६

मूल :–निष्क्रियाणि च ॥७॥

भाषा :— 'धर्म', 'अधर्म' 'अकाश' हि तीन ।
हलन चलन बिन क्रिया विहीन ॥७॥

शब्द भेद भी सुनिए दोय । 'वैस्रसिक' हि प्रायोगिक होय ॥
स्निग्ध रूक्ष मिल के स्वयमेव । बादल, विद्युत प्रगटहिं येव ॥
पुरुष यत्न 'प्रायोगिक' मान । ता के पुनि दो भेद बखान ॥
बंध अजीव-अजीव हि एक । काष्ठ-लाख मिल बंध अनेक ॥
जीव-अजीवहिं दूजा जान । आत्म कर्म के बंध प्रमाण ॥
सूक्ष्म सूक्ष्मतम दोहि विचार । सबसे अधिक प्रथम विस्तार ॥
दूजा आपेक्षिक कहलाए । बेर बेल में सूक्ष्म बताए ॥
'संस्थान' अथवा आकार । सो भी ऐसा दोहि प्रकार ॥
'इत्थं लक्षण' पहला जान । गोला, चौड़ा आदि बखान ॥
रूप लक्षण रहे अरूप । सोई 'अनित्थं लक्षण' रूप ॥
खंड पुद्गल हि 'भेद' बखान । षाष्ठ प्रकारा 'उत्कर' जान ॥
आटा आदिक 'चूर्ण' कहाए । घट के टुकड़े 'खंड' बताए ॥
दाल-चोंत 'चूर्णिका' विचार । 'प्रतर' मेघ पटलहिं विस्तार ॥
लोह-तपित 'अणु-चटन' कहाए । यों दूसरे पद भेद बताए ॥
अन्धकार ही 'तम' कहलाए । 'छाया' के दो भेद बताए ॥
जस की तस दर्पण में होय । धूप आदि मों नाना होय ॥
सूर्य प्रकाशहिं 'आतप' होय । शीतल चंद्र प्रकाश 'उद्योत' ॥२४॥

पुद्गल के भेद :—

सूत्र :—अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥

भाषा :— पुद्गल के दो भेद बताए ।
'परमाणु', 'स्कन्ध' कहाए ॥
अणु अविभागी एक प्रदेश ।
एकाधिक 'स्कन्ध' विशेष ॥२५॥

खट्टा, मीठा, कड़ुवा जान। तीता और कसैला मान॥
रसहिं पच सो, दो हैं गंध। नाम सुगध और दुर्गन्ध॥
काला, नीला, लाल, सफेद। पंचम पीत वर्ण के भेद॥
मूल वर्ण सो केवल पच। बहु प्रभेद नहिं सशय रंच॥२३॥

पुद्गल द्रव्य की मुख्य १० पर्याय :—

मूल :—शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥

भाषा :— सज्जन वृन्द सुनहु अब नेक।
पुद्गल की पर्याय अनेक॥
'शब्द' 'बन्ध' 'सौक्ष्म्य' बताए।
पुनि–'स्थौल्य' 'संस्थान' कहाए॥
'भेद' और 'तम' 'छाया' मान।
'आतप' अरु 'उद्योतहिं' जान॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्या :—

शब्द भेद दो होहिं अनूप। भाषा और अभाषा रूप॥
भाषा पुनि दो रूप बखान। अक्षर और अनक्षर जान॥
मानव सब करते व्यवहार। भाषा अक्षर रूप विचार॥
पशु पक्षिन की बोली जोय। भाषा अन्-अक्षर है सोय॥
रूप अभाषा शब्दहुँ दोय। पुरुष यत्न 'प्रायोगिक' होय॥
मेघ-गर्जना आदिक जान। 'स्वाभाविक' नैसर्गिक मान॥
प्रायोगिक पुनि चार प्रकार। वाद्य चाम के 'तत' चितधार॥
तार आदि के बाजे जोय। 'वितत' नाम ही तिनका होय॥
घटा आदिक 'घन' कहलाए। बंशी आदि 'सुषिर' मन भाएँ॥

[illegible] भेद की मुख्यता होय । 'वैभाविक' हि [illegible] होय ॥
[illegible] [illegible] है [illegible] । [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] ॥
पुद्गल बन्ध 'प्रायोगिक' [illegible] । ता के पुनि दो भेद बताय ॥
[illegible] [illegible] हि [illegible] । [illegible] [illegible] [illegible] बन्ध [illegible] ॥
[illegible] [illegible] [illegible] बन्ध । [illegible] कर्म के बन्ध [illegible] ॥
[illegible] [illegible] विचार । [illegible] अधिक बन्ध विस्तार ॥
सूक्ष्म [illegible] कहलाए । [illegible] [illegible] के सूक्ष्म बताए ॥
'[illegible]' अक्षरः अनक्षर । [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥
'[illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] । [illegible], [illegible] आदि बताय ॥
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] । [illegible] 'अविभागी [illegible]' [illegible] ॥
[illegible] पुद्गल हि 'भेद' बताय । [illegible] [illegible] '[illegible]' [illegible] ॥
[illegible] [illegible] 'सूक्ष्म' कहाए । यह है दूसरे '[illegible]' बताए ॥
[illegible] '[illegible]' [illegible] । '[illegible]' भेद [illegible] विस्तार ॥
[illegible] 'अणु-स्कन्ध' कहाए । सो दुहूँ [illegible] भेद बताए ॥
[illegible] ही 'रूप' कहलाए । 'छाया' के दो भेद बताए ॥
[illegible] गुण [illegible] । धूप आदि भी [illegible] होय ॥
[illegible] 'आतप' होय । [illegible] [illegible] '[illegible]' ॥२०॥

पुद्गल के भेद —

सूत्र:— अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥

पद्य:— पुद्गल के दो भेद बताए ।
'परमाणु', 'स्कन्ध' कहाए ॥
अणु अविभागी एक प्रदेश ।
एकाधिक 'स्कन्ध' विशेष ॥२५॥

खट्टा, मीठा, कड़ुवा जान। तीता और कसैला मान॥
रसहिं पंच सो, दो हैं गंध। नाम सुगंध और दुर्गन्ध॥
काला, नीला, लाल, सफेद। पंचम पीत वर्ण के भेद॥
मूल वर्ण सो केवल पंच। बहु प्रभेद नहिं संशय रंच॥२३॥

पुद्गल द्रव्य की मुख्य १० पर्याय :—

मूल :—शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायातपो-द्योतवन्तश्च ॥२४॥

भाषा :— सज्जन वृन्द सुनहु अब नेक।
पुद्गल की पर्याय अनेक॥
'शब्द' 'बन्ध' 'सौक्ष्म्य' बताए।
पुनि—'स्थौल्य' 'संस्थान' कहाए॥
'भेद' और 'तम' 'छाया' मान।
'आतप' अरु 'उद्योतहिं' जान॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्या :—

शब्द भेद दो होहिं अनूप। भाषा और अभाषा रूप॥
भाषा पुनि दो रूप बखान। अक्षर और अनक्षर जानें॥
मानव सब करते व्यवहार। भाषा अक्षर रूप विचार॥
पशु-पक्षिन की बोली जोय। भाषा अन्-अक्षर है सोय॥
रूप अभाषा शब्दहुँ दोय। पुरुष यत्न 'प्रायोगिक' होय॥
मेघ-गर्जना आदिक जान। 'स्वाभाविक' नैसर्गिक मान॥
प्रायोगिक पुनि चार प्रकार। वाद्य चाम के 'तत' चितधार॥
तार आदि के बाजे जोय। 'वितत' नाम ही तिनका होय॥
घटा आदिक 'घन' कहलाएँ। बंशी आदि 'सुषिर' मन भाएँ॥

शब्द भेद दो पुनि होय । 'वैस्रसिक' रु प्रायोगिक होय ॥
विश्व स्वभाविक हैं घनमेघ । आदिक, विद्युत यामहिं लेख ॥
पुरुष यत्न 'प्रायोगिक' जान । ता के पुनि दो भेद बखान ॥
भाषा अक्षर-अनक्षर द्वि रूप । शब्द नाम जिन मत अनेक ॥
जीव-अजीवहिं दूजा जान । आगम अर्थ पै बंध बखान ॥
सूक्ष्म सूक्ष्मतर दोहिं विभाग । सबते अधिक प्रथम विस्तार ॥
दूजा आपेक्षिक कहलाए । बेर बेल में सूक्ष्म बताए ॥
'संस्थान' सकल आकार । सो भी दो विध होहिं प्रकार ॥
'इत्थं लक्षण' गोला जान । लम्बा, चौरा आदि बखान ॥
जा कहलाए नहीं अस्त्र । सोइ 'अनित्थं लक्षण' लख ॥
खंड पुद्गल हि 'भेद' बखान । बाट पुद्गल 'उत्कर' जान ॥
...दा आदिक 'चूर्ण' कहाए । पटु से टुकड़े 'खंड' बताए ॥
...कोट् 'प्रतिका' विचार । 'प्रतर' भेद बहुरि विस्तार ॥
...कुलिंग 'अणुचटन' कहाए । सो दूसरे पट भेद बताए ॥
...प्रकार ही 'तम' कहलाए । 'छाया' के दो भेद बताए ॥
...की सम दर्पण में होय । धूप आदि को माया होय ॥
...रै प्रकाशहि 'आतप' होय । शीतल चंद्र प्रकाश 'उद्योत' ॥२४॥

पुद्गल के भेद :—

सूत्र :—अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥

दोहा :— पुद्गल के दो भेद बताए ।
'परमाणु', 'स्कन्ध' कहाए ॥
अणु अविभागी एक प्रदेश ।
एकाधिक 'स्कन्ध' विशेष ॥२५॥

२५वें सूत्र की व्याख्या —

पहले वर्णित गुण निरधार । गंध, वर्ण, रस एक प्रकार ॥
शीत-उष्ण में एक बखान । स्निग्ध रूक्ष में भी इक जान ॥
दो स्पर्श अणु प्रत्येक । स्कंधादि स्पर्श-अष्ट अनेक ॥२५॥

स्कन्धों की उत्पत्ति कैसे होती है —

सूत्र —भेदसंघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥

भाषा :— स्कंधों का कारण मान ।
'भेद' और 'संघात' बखान ॥२६॥

२६वें सूत्र की व्याख्या —

स्कंध टूटना 'भेद' बताए । मिल अणु संघात कहाए ॥
भेद अणु का जितने होय । स्कंध प्रदेशी उतने गोय ॥२६॥

अणु बनने का कारण —

सूत्र —भेदादणु ॥२७॥

भाषा :— अणु बनने में कारण मान ।
स्कन्धों का भेद बखान ॥२७॥

स्कंध का कारण भेद संघात क्यों कहा :—

मूल :—भेद संघाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥

भाषा :— कारण भेद संघात बताए ।
आँखों से स्कन्ध दिखाए ॥२८॥

द्रव्य तथा सत का लक्षण .—

मूल :—सद् द्रव्यलक्षणम् ॥२९॥
उत्पाद-व्यय-ध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥

भाषा :— द्रव्यहिं लक्षण सुन चित लाए ।
सत है जो सो द्रव्य कहाए ॥२९॥
सत कहिए 'उत्पाद' हिं युक्त ।
हो 'व्यय' और 'ध्रौव्य' संयुक्त ॥३०॥

३०वें सूत्र की व्याख्या :—

नव पर्याय नाम 'उत्पाद'। ता का नाश 'व्यय' बिना विवाद ॥
निज स्वभाव नहि छोड़े सोय। पर्यायें कितनी भी होय ॥
वस्तु 'ध्रौव्य' गुण सो ही मान। सब गुण सो सब द्रव्यहि जान ॥
जैसे घट मिट्टी पर्याय। टूटे मिट्टी नहि बिनसाय ॥
एक साथ ही तीनों धर्म। द्रव्यों में परिवर्तन मर्म ॥
सत का नहि सर्वथा विनाश। असत न उपजे साग प्रयास ॥
निज स्वभाव नहि छोड़े कोय। जड़ चेतन पुन कबहुँ न होय॥३०॥

नित्य का स्वरूप :—

मूल :—तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥

भाषा :— वस्तु स्वभाव कहा 'तद्भाव'।
कुछ अविनश्वर 'नित्य' बताव ॥
तासों पुनि द्रव्यन पहिचान।
नित्य-अनित्य दोऊ हैं जान् ॥३१॥

३१वें सूत्र की व्याख्या :—

घट फूटा-पर्याय अनित्य। मिट्टी शेष अपेक्षा नित्य ॥
नित्य-अपेक्षा है सामान्य। पर पर्याय अनित्य बखान ॥
एक व्यक्ति सम्बन्ध अनेक। भिन्न अपेक्षा ही प्रत्येक ॥३१॥

वस्तु के मुख्य और गौण धर्म :—

मूल :—अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥

भाषा :— मुख्य धर्म को 'अर्पित' कहा।
गौण हि धर्म 'अनर्पित' रहा ॥
दोनों से मिल कर हो सिद्ध।
वस्तु कई गुण युक्त प्रसिद्ध ॥३२॥

सूत्र :-बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ ॥३७॥

भाषा :— अधिक गुणों से जो हो युक्त ।
सो कम से निज में संयुक्त ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या :—

दुर्ये अथवा तक कर मान । यथ अवस्था तीजी जान ॥
ता से रहे न भिन्न भेद । ज्यों पट धारे श्याम सफेद ॥
जो गुण में ज्यादा अधिकार । कम गुण वाला जाए विकार ॥
नाहिं अवस्था तीजी होय । ता तें बन्ध स्वयं न होय ॥३७॥

द्रव्य का अन्य प्रकार से लक्षण :—

सूत्र :—गुणपर्ययवत् द्रव्यम् ॥३८॥

भाषा :— जा में होवें गुण पर्याय ।
वस्तु 'द्रव्य' सो ही कहलाय ॥३८॥

३८वें सूत्र की व्याख्या :—

चाहे जितनी हों पर्याय । द्रव्य साथ जो गुण कहलाय ॥
रूप आदि पुद्गल के जान । और जीव का गुण है ज्ञान ॥
गुण पलटना वस्तु कहलाए । व्यय उत्पाद कही पर्याय ॥
द्रव्य तथा गुण अरु पर्याय । जुदे न, सो 'गुण' द्रव्य कहाय ॥
गुण शास्त्रन 'अन्वयी' बखान । 'व्यतिरेकी' पर्याय कहाय ॥३८॥

काल द्रव्य का कथन :—

सूत्र :-कालश्च ॥३९॥

भाषा :— काल द्रव्य है रूप विहीन ।
असंख्यात, निष्क्रिय, गतिहीन ॥३९॥

गंध स्पर्शादिक से है हीन । काल अमूर्तिक रूप विहीन ॥
दर्शन ज्ञान रहित है सोय । ता तें काल अचेतन होय ॥

लोकाकाश अनत प्रदेश । हर पर है कालाणु एक ॥
रतन राशि सम सो कालाणु । रहें भिन्न तातें नहिं काय ॥
अलग-अलग स्थित, नहिं एक । काल द्रव्य कहलाएँ अनेक ॥
जितने लोकाकाश प्रदेश । उतने काल न घटाय लेश ॥
एक प्रदेश न दूजे जाएँ । सब स्थित, निष्क्रिय कहलाएँ ॥३९॥

व्यवहार काल का प्रमाण :-

मूल :-सोऽनन्तसमयः ॥४०॥

भाषा :— सो अनन्त समयों से युक्त ।
भूत भविष्यत नाम प्रयुक्त ॥
वर्तमान है 'समय' प्रमान ।
भूत भविष्य अनंतहि जान ॥४०॥

काल अंश सुनिए चितलाय । सबसे छोटा 'समय' कहाय ॥
समय-समूह काल-व्यवहार । घंटा, मिनट आदि चितधार ॥४०॥

गुण का लक्षण :-

मूल :-द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥

भाषा :— द्रव्याश्रय से ही जो रहें ।
यों निर्गुण, तिनको गुण कहें ॥४१॥

परिणाम का लक्षण :—

मूल :-तद्भावः परिणामः ॥४२॥

भाषा :— निज स्वभाव तद्भाव बताए ।
सो ही पुनि परिणाम कहाए ॥४२॥

धर्म द्रव्य गति होय सहाय । तद्भावहि परिणमन कहाय ॥४२॥

(पाँचवाँ अध्याय समाप्त)

छठा अध्याय

इस अध्याय में आस्रव तत्त्व का वर्णन है।

सूत्र:—कायवाङ्मनः कर्मयोगः ॥१॥

भाषा:— काय, वचन अरु मन की क्रिया।
'योग' नाम सो ही को दिया ॥१॥

इस सूत्र की व्याख्या:—

आत्म प्रदेशहिं हलचल होय। आगम 'योग' कहावे सोय ॥
भेद निमित्तहिं त्रय विस्तार। काय, वचन, मन योग विचार ॥
दो कारण प्रत्येक बताए। 'अन्तरंग' अरु बाह्य कहाए ॥
प्रथम-कर्म-क्षय-उपशम भाव। कारण बाह्य वर्गणा जान ॥
गुणस्थान तेरह तक सोय। योगाभाव चौदहवें होय ॥१॥

यह योग ही आस्रव है:-

सूत्र:-स आस्रवः ॥२॥

भाषा:— आत्म प्रदेशहिं हलचल योग।
आस्रव हेतु कहैं सब लोग ॥२॥

दूसरे सूत्र की व्याख्या:-

पुण्य पाप दो कर्म प्रकार। आस्रव हेतु योग है द्वार ॥
नम घट धूलि आदि ज्यों गहे। कर्म-वर्गणा-रज त्यों गहे ॥
आत्म कषायहिं नम जब होय। योग कहावे आस्रव सोय ॥
तप्त लोह ज्यों जल सोखाय। अशुद्धातम त्यों कर्म खैंचाय ॥२॥

अधिकरण के भेद —

सूत्र —अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥

भाषा:— अधिकरण हि आस्रव आधार।
जीव-अजीवहिं विविध प्रकार ॥७॥

जीवाधिकरण के भेद—

सूत्र:—आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत कषाय-विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥८॥

भाषा:— वश प्रमाद 'सम्रम्भ' नवीन।
'समारम्भ', 'आरम्भ' सु तीन ॥
तीन भेद पुनि मन-वच-काय।
कृत-कारित-अनुमोदन माय ॥
क्रोध-मान-माया अरु लोभ।
इन सबसे उपजे विक्षोभ ॥
सो जीवाधिकरण के भेद।
गुणन किए शत-आठ प्रभेद ॥८॥

८ वें सूत्र की व्याख्या:—

कर्मास्रव शत-आठ प्रकार। क्षरण हेतु माला चित्रधार ॥
निश्चय ही 'सम्रम्भ' कहाय। 'समारम्भ' साधन हि जुटाय ॥
कार्यारम्भ 'आरम्भ' हि मान। भावहि साधन तीनो जान ॥
स्वय करे सो 'कृत' कहलाए। 'कारित' दूजे से करवाए ॥
कार्य सराहे अन्यहि जोय। 'अनुमोदना' कहावे सोय ॥
हर कषाय के चार प्रकार। गुणन किए सोलह विस्तार ॥
तीन भेद हर इक बतलाय। भे अड़तालिस मन-वच-काय ॥
यो जीवाधिकरण कुल भेद। चार शतक बत्तीस प्रभेद ॥८॥

अजीवाधिकरण के भेदः—

मूल :—निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-
भेदा परम् ॥९॥

भाषाः— अब अजीव अधिकरण बताए ।
रचना 'निर्वर्तना' कहाए ॥
रख-रखाव 'निक्षेप' बखान ।
मेल वस्तु 'संयोग' हि जान ॥
भेद होहिं क्रमशः दो चार ।
संयोग हि पुनि दोय प्रकार ॥
नाम 'निसर्ग' प्रवृत्तिहिं लहे ।
मन-वच-काय भेद त्रय कहे ॥६॥

९वें सूत्र की व्याख्याः—

निर्वर्तन दो भेद बखान । मूल और उत्तर गुण जान ॥
मूल-शरीर, वचन, मन जान । श्वासोच्छ्वासहि सहित बखान ॥
दूजा उत्तर गुण कहलाय । काष्ठ आदि पर चित्र बनाए ॥
वस्तु धरे बिन देखे जोय । 'अप्रत्यवेक्षित' कहिए सोय ॥
दुष्ट मनस्थिति रखे-रखाए । 'दुष्प्रमृष्ट' निक्षेप कहाए ॥
पटके जल्दी-पल्दी जान । सो 'सहसा निक्षेप' बखान ॥
साफ किए बिन मेटे जोय । 'अनाभोग निक्षेप' हि सोय ॥
खान-पान में मेल मिलाय । 'भुक्तपान संयोग' कहाय ॥
अन्यहि वस्तु मिलावे जान । 'उपकरणहि सयोग' बखान ॥
त्रय 'निसर्ग' के भेद बताय । दुष्ट प्रवृत्ति हि मन, वच, काय ॥
आस्रव ग्यारह भेद बताय । सो अजीव अधिकरण कहाय ॥
कर्मास्रव सामान्य प्रकार । आगम में जानहु विस्तार ॥९॥

ज्ञानावरण तथा दर्शनावरण कर्मों के आस्रव के कारण.—

मूलः—तत्प्रदोष-निन्हव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥

भाषाः— ईर्षा आदि 'प्रदोष' कहाय। —
'निन्हव' निज अज्ञान बताय ॥
'मात्सर्य' निज ज्ञान छिपाए।
विघ्नहि 'अन्तराय' कहलाए ॥
'आसादना' और 'उपघात'।
ज्ञान-दर्शनावरण बँधात ॥१०॥

१०वें सूत्र की व्याख्या —

ज्ञान अरु दर्शन के आवरण। कर्म कहे आस्रव पट वरण ॥
पर समाधण बाधा लाय। कर प्रयोग निज बल वच, काय ॥
मान करे नहिं सम्यक ज्ञान। 'आसादना' कही सो जान ॥
ता ही को यदि झूठा कहे। सो उपघात' हेतु को सहे ॥
प्रदोषादि दो भेद बखान। जिन वश रुकता दर्शन,ज्ञान ॥१०॥

असाता वेदनीय कर्म आस्रव के कारण.—

मूलः—दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवनान्यात्म-परोभयस्थानान्य-सद्वेद्यस्य ॥११॥

भाषाः— 'दुख', 'शोक' अरु 'ताप' कहाए।
'आक्रन्दन' पुनि 'वध' बतलाए ॥
'परिदेवन' यह क्रन्दन मान।
स्व-पर दुखी हो जा सों जान ॥
कर्म असाता आस्रव काज।
सभी शत्रुवत रहे निराज ॥११॥

११वें सूत्र की व्याख्या—

दुख शोक कर खुद दुख पाय । अथवा पर को हो दुखदाय ॥
या दोनों को ही हो क्लेश । कर्मास्रव, नहि संशय लेश ॥
रुदन सहित, हाहाकार । न्यायान्याय का करे विचार ॥
दौड़-धूप दुख पावे जान । कर्जदार भी दुखी महान ॥
निज-पर दोनों को दुखदाय । सो अनवरत क्लेश कहलाय ॥११॥

सातावेदनीय कर्म के आस्रव के कारणः—

मूलः—भूत-व्रत्यनुकम्पा-दान सरागसंयमादियोग क्षान्ति शौच-
मिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥

भाषाः— प्राणी और व्रती पर दया ।
नाम सोई 'अनुकम्पा' भया ॥
'दान' और 'संयम-सहराग' ।
आत्मज्ञान बिन जो हो त्याग ॥
मन एकाग्र करे धर ध्यान ।
'योग' कहाये सो ही जान ॥
क्षमा भाव सो 'क्षान्ति' कहाए ।
लोभ छोड़ना 'शौच' कहाए ॥
कर्मास्रव हो उक्त प्रकार ।
सातावेदनीय निरधार ॥१२॥

१२वें सूत्र की व्याख्याः—

शुभभाव में कारण जान । सातावेदनीय को मान ॥
औषध, शास्त्र, अभय अहार । दान बताया चार प्रकार ॥१३॥

२३वें सूत्र की व्याख्या :—

सत पुरुषों को जो आदरे। मन संसार भीरुता धरे॥
अप्रमाद, निश्छल चारित्र। नाम कर्म शुभ कारण मीत॥
तासों वदन मिले मनुहार। सुन्दर, बलयुत विविध प्रकार॥२३॥

तीर्थंकर नाम कर्म के आस्रव के कारण:—

मूल'—दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग-सवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधु-समाधि-वैयावृत्यकरण-मर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन भक्ति-रावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥२४॥

भाषा:— नाम कर्म तीर्थंकर शेष।
सोलह कारण कहे विशेष॥
'दर्श-विशुद्धि' प्रथम बतलाए।
'विनय-यानता' पुनि कहलाए॥
दोष रहित व्रत शील विचार।
'शीलव्रतेषु बिना अतिचार॥
'पाठन-पठन सु सम्यग्ज्ञान'।
भवोद्विग्न 'संवेग' बखान॥
शक्तिनुसार करे जो 'त्याग'।
शक्ति प्रमानहि 'तप' वैराग॥

विघ्न तपस्वी, मुनि करि दूर।
'साधु-समाधि' लहे भरपूर ॥
पुनः साधु की विपदा हरे।
'वैयावृत्यकरण' सो करे ॥
'श्री अर्हंत देव', 'आचार्य'।
उपाध्याय, आगम सिरधार्य ॥
भक्ति भाव इन सब में होय।
'बहुश्रुत','प्रवचनभक्ति' हि सोय ॥
नियत समय,प्रतिदिन, चितलाय।
षट 'आवश्यक कर्म' बताय ॥
जिनमत 'मार्ग प्रभावन' करे।
'प्रवचन वत्सलत्व' मन धरे ॥२४॥

२४वें सूत्र की व्याख्याः—

दर्श विशुद्ध हि अंग बताए। आठ प्रकार कहे समझाए ॥
शंका हीन निशंकित होय। 'निष्कांक्षित' इच्छा बिन जोय ॥
सम्यक दर्शन-ज्ञान-चरित्र। भरे हुए भंडार पवित्र ॥
ऊपर दिखहिं असुन्दर जान। तो भी विरति न मुनि प्रतिमान ॥
खेद न तनिक हृदय में आय। 'निर्विचिकित्सा' अंग कहाय ॥
किंचित नहिं मिथ्या श्रद्धान। सो 'अमूढदृष्टिता' जान ॥
अन्य दोष नहिं सबहिं बताय। सो ही 'उपगूहन' कहलाय ॥

अन्तराय कर्म के आस्रव के कारणः—

मूलः-विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥२७॥

भाषा :— दानहिं, लाभ, भोग, उपभोग ।
पंचम वीर्य कहें सब लोग ॥
इनमें विघ्न करे जो कोय ।
अन्तराय कर्मास्रव होय ॥२७॥

२७वें सूत्र की व्याख्याः—

पाँचों में से .रोके जोय । सोइ नाम कर्मास्रव होन
दान समय यदि विघ्न लगाय । कर्मास्रव 'दानान्तराय'
ता का हो अनुभाग विशेष । भाग सप्त कर्मों में शेष
इसी भाँति सब ही में जान । कर्मास्रव हो निश्चय मान ॥२

(छठा अध्याय समाप्त)

सातवाँ अध्याय

इस अध्याय मे व्रतादि का स्वरूप बतलाया गया है।

व्रतों का स्वरूप:—

मूल:—हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥१॥

भाषा:— 'हिंसा', 'अनृत' और 'स्तेय'।
'अब्रह्म', 'परिग्रह' को तज देय ॥
त्याग नियम से निश्चय ठान।
व्रत सो मन-संकल्प बखान ॥१॥

१ले सूत्र की व्याख्या:—

पर दुख देना 'हिंसा' होय। 'अनृत' झूठ कहे सब कोय ॥
चोरी ही 'स्तेय' कहाय। और कुशील 'अब्रह्म' बताय।
धन-दौलत-भोगहिं अति प्रीत। सोइ 'परिग्रह' कहिए मीत ॥
पाप-विरक्ति विरति कहलाय। आगम मे सो व्रत बतलाय ॥
धर्म अहिंसा सर्व प्रधान। ता ते कथन प्रथम ही जान ॥
अन्य धर्म सब बाड़ समान। रक्षा करते धर्म महान ॥१॥

व्रतों के भेद:—

मूल:—देश-सर्वतोऽणु-महती ॥२॥

भाषा:— एक देश 'अणुव्रत' है मान।
पूरा त्याग 'महाव्रत' जान ॥२॥

२सरे सूत्र की व्याख्या:—

कुछ वस्तु, कुछ काल प्रमान। त्याग सोइ 'इक देश' बखान ॥
अथवा 'अणुव्रत' कहिए सोय। आजीवनहिं 'महाव्रत' होय ॥२॥

अनृत (असत्य) का लक्षण:—
मूल—असदभिधानमनृतम् ॥१४॥
भाषा:— बात कष्टप्रद पर को होय।
है असत्य या 'अनृत' सोय ॥१४॥
१४वें सूत्र की व्याख्या:—
मिथ्या झूठ कहें सब कोय। कटुक सत्य भी मिथ्या होय॥
काने को यदि काना कहे। व्यग्य-बाण सम ताको सहे॥
हिंस वचन है असन समान। स्व-पर दुखी हों जासों जान॥
धर्म अहिंसा सर्व प्रधान। अन्य चार रक्षार्थ बखान ॥१४॥

चोरी का लक्षण:—
मूल:—अदत्तादान स्तेयम् ॥१५॥
भाषा:— बिना दिए पर वस्तु उठाए।
चोरी या स्तेय कहाए ॥१५॥
१५वें सूत्र की व्याख्या —
पर वस्तू, बिन अनुमति मान। बुरे भाव गह लेवे जान॥
रहे अप्राप्य, प्राप्त या होय। चौर्य वृत्ति ही जानो सोय ॥१५॥

अब्रह्म का लक्षण:—
मूल:—मैथुनमब्रह्म ॥१६॥
भाषा:— रति-सुख-हेतु क्रिया ही मान।
है अब्रह्म या मैथुन जान ॥१६॥
१६वें सूत्र की व्याख्या:—
अहिंसादि पालन हित काम। सो ही कहिए ब्रह्म ललाम॥

मैथुनादि वश बाधा होय । कार्य अब्रह्म कहावे सोय ॥
चारित मोह उदयवश जोय । स्त्री पुरुष समागम होय ॥
जा में रति-सुख हेतु प्रयास । मैथुन सोइ कहावै जान ॥
कभी-कभी दो पुरुष विचार । अथवा दो स्त्री चितधार ॥
या कुचेष्टा स्वयं ही मान । सब अब्रह्म मैथुन जान ॥१६॥

परिग्रह का लक्षण:—

सूत्र—मूर्च्छा परिग्रहः ॥१७॥

भाषा:— भाव ममत्वहि मूर्च्छा कहा ।
नाम परिग्रह दूजा लहा ॥१७॥

१७वें सूत्र की व्याख्या:—

मूर्च्छा अर्थ यही धीमान । अभिलाषा नहीं है आन ॥
बाह्य वस्तु में हो अति चाव । मूर्च्छा सोइ परिग्रह भाव ॥
ममता दर्शन-ज्ञान-चरित्र । नहीं परिग्रह मूर्च्छा मित्र ॥
तृष्णा बहुत गांठ नहिं दाम । अंतर भाव परिग्रह नाम ॥
योग प्रमत्तहि मन-वच-काय । सर्व पाप कारण बतलाय ॥१७॥

व्रती का स्वरूप:—

सूत्र:—निःशल्यो व्रती ॥१८॥

भाषा:— माया मिथ्या और निदान ।
शल्य रहित त्रय, व्रती महान ॥१८॥

१८वें सूत्र की व्याख्या:—

शल्य यहीं तीनों दुखदाय । शल्य रहित सो व्रती कहाय ॥
[illegible] 'शल्य' [illegible] ॥

मन, वच और काय कुद्ध और । 'माया' शल्यों मे सिरमौर ॥
नाहिं होय सत्यहिं श्रद्धान । 'मिथ्यादर्शन शल्य' बखान ॥
विषयासक्ति 'निदान' कहाय । शूल समान सभी दुखदाय ॥
तीनों शल्य हृदय नहिं जोय । सम्यक व्रती कहावे सोय ॥
जग-छल-हित व्रत धारण करे । भोग चाह या मन में धरे ॥
भेष भले हो साधु समान । व्रती कदापि न ताको जान॥१८॥

व्रती के भेदः—

मूल.–अगार्यनगारश्च ॥१९॥

भाषा:— व्रत पालक दो भेद बखान ।
गृह में वास 'अगारी' जान ॥
गृह त्यागी 'अनगारी' कहा ।
मुख्य विभेद प्रवृत्तिहिं रहा ॥१९॥

अगारी व्रती का स्वरूपः—

मूलः—अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥

भाषा:— एक देश अणुव्रत ले पाँच ।
ता ही नाम 'अगारी' साँच ॥२०॥

२०वें सूत्र की व्याख्या:—

त्रस जीवों की 'हिंसा' त्याग । त्याग 'असत' वश ईर्ष्या राग ॥
ले व्रत नहिं पर वस्तु चुराए । 'अचौर्याणुव्रती' कहलाए ॥
तजे भोग पर-स्त्री जोय । 'ब्रह्मचर्याणुव्रती' सो होय ॥
सीमा धन, भोगादिक जान । अणु व्रत सो 'परिग्रह परिमान' ॥
पाँचों अणु व्रत पाले जोय । नाम 'अगारी' सार्थक सोय ॥२०

[illegible] गुणों के नाम और रूप —

[illegible]

[illegible] ॥२१॥

[illegible]— नाम रूपादि 'प्रमाणो' ओर ।
कहिए सब व्यापक सिरमोर ॥
'दिग्' अरु 'देश-निर्दि' को जान ।
गमनादिक् का करे प्रमाण ॥
कहा 'तदर्थ-स्वर' सब गोर ।
बिना स्थान अरु संयत हीत ॥
'गमनादिक', 'प्रोदयोरवान' ।
करे प्रमाणी धर विश्वास ॥
'परिमाणोत्पत्ति — परिमाण' ।
'प्रतिविधि गतिमान'हि पुनि जान ॥२१॥

१४ गुण की व्याख्या —

[illegible] किया प्रमाण । कोई नहीं, [illegible] आदि बखान ॥
[illegible] ॥
[illegible], दशादि बखान । गमनादिक का करे प्रमाण ॥
[illegible] हेतु हो जात । [illegible] कहिए गोर ॥
[illegible] पीर [illegible] । [illegible] अरु 'जाग-उदय' ॥
[illegible], [illegible] । [illegible] अनुभवुनि' जान ॥
[illegible] विचारे जगहि और । 'अरूपवान' हो कहिए गोद ॥
[illegible] को देवे नाम । [illegible] कहाय ॥
[illegible] । [illegible] ॥

मो सब कर्म 'प्रमाद चरित्र' । दण्ड-अनर्थहिं तीजा मित्र ॥
विष,शस्त्रादि हिंस सामान । दिए कहावे 'हिंसादान' ॥
पाप वृत्ति हो सुने, सुनाए । कथा 'अशुभ श्रुति'सोइ कहाए ॥
इनका त्याग करे जो कोय । 'विरति-अनर्थ-दण्ड व्रत' सोय ॥
समय नाम आतम का जान । आत्म ध्यान'सामायिक' मान ॥
करे समायिक सन्ध्या तीन । श्रावक सो व्रत मे परवीन ॥
अशन, भक्ष्य,लेह्य अरु पान । त्याग करे उपवासहिं जान ॥
पचेन्द्रिय निज तजहिं विलास । रहे उदासी, सो उपवास ॥
अष्टम अरु चौदस तिथि चार । प्रतिमासहिं उपवास विचार ॥
पर्व दिवस ही प्रोषध होय । वृत प्रोषधोपवासहिं सोय ॥
इत्यादिक अरु भोजन पान । एक बार ही 'भोग' बखान ।
भोगी जावे बारबार । वस्त्रादिक 'परिभोग' विचार ।
वृत इनका मन सीमा ठान । 'परिभोगोपभोग परिमान' ।
तिथि निश्चित नहिं जाको जान । वृती अतिथि को देवे दान ।
'अतिथि-संविभागहिं-वृत' सोय । पाले वृती अगारी होय ।
औषध, शास्त्र, अभय, आहार । 'अतिथि संविभागहिं वृत'चार ।
पच वृतो मे दृढता लाएँ । विरति तीन 'गुणवृत' कहलाएँ ॥
आत्म सयमन हेतु विचार । अतिम हैं'शिक्षावृत'चार ॥२१॥

सल्लेखना का वर्णनः—

मूलः—मारणान्तिकी सल्लेखना जोषिता ॥२२॥

भाषाः— मरण काल को निश्चित जान ।
सल्लेखना मनहि ले ठान ॥
खान-पान, मोहादिक तजे ।
काय, कषाय कृशे, प्रभु भजे ॥२२॥

२२वें सूत्र की व्याख्या.-

आयुष कर्म परिणाम मलीन । सो तन मृत्यु कहावे लीन ॥
निकट मृत्यु का कर अनुमान । त्यागन कर दे भोजन पान ॥
राग-द्वेष, अरु-मोह भुलाए । सबसे ममता भाव हटाए ॥
आतम चिंतन में चित धरे । निकट मृत्यु का स्वागत करे ॥
मृत्यु जहाँ पर निश्चित होय । आत्मघात नहिं कहिए सोय ॥
राग, द्वेष वश मृत्यु बुलाए । डूब मरे, विष आदिक खाए ॥
आत्मघात सो ही को जान । अन्तर है भू-गगन समान ॥
आग लगी यदि घर में होय । वस्तु अमूल्य बचावें लोय ॥
मरण काल में त्योंहि समान । धर्म अमूल्य गहे, तज प्राण ॥
वेदन-मृत्यु घटे निरधार । शुभ-गति हो परलोक मंझार ॥२२॥

अब व्रतों के दोषों:- (अतिचारों) का विवेचन करते हैं ।

सम्यग्दर्शन के अतिचार:-

सूत्र.-शंका-कांक्षा विचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसा संस्तवा
सम्यग्दृष्टेरतिचाराः ॥२३॥

भाषा :— सम्यक दर्शन के अतिचार ।
अथवा दोष सुनहु चितधार ॥
आगम द्विविधा 'शंका' मान ।
भोग चाहना 'कांक्षा' जान ॥
घृणा दुखी, रोगी से होय ।
अघ 'विचिकित्सा' कहिए सोय ॥
मन मिथ्यात्व करे सम्मान ।
[illegible]

ताहि वचन से भी आदरे ।
'अन्य दृष्टि का संस्तव' करे ॥२३॥

सो पन दोष रहित नहिं जोग । सम्यग्दृष्टि रहित सो भोग ॥२३॥

व्रत और शीलों के अतिचार —

मूल —व्रत-शीलेषु पंच पंच यथाक्रमम् ॥२४॥

भाषा:— व्रत अरु शील कहे अतिचार ।
पाँच पाँच क्रमशः चितधार ॥२४॥

सप्त शील, व्रत पंच विचार । पांच पांच सबके अतिचार ॥
अहिंसादि व्रत पंच महान । सप्त शील रक्षक सम जान ॥२४॥

अहिंसाणु व्रत के अतिचार —

मूल —बन्ध-वध-च्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥

भाषा:— जीव 'बन्ध', 'वध'अथवा'छेद' ।
व्रत अतिचार अहिंसा भेद ॥
चव 'अतिभारारोपण' जान ।
पँच निरोध ही भोजन-पान ॥२५॥

२५वे सूत्र की व्याख्या —

पिंजरा या खूँटादि बँधाए । पशु-पक्षिन को, 'बन्ध' कहाए ॥
कोड़े, बेतादिक की मार । कहलावे सो 'वध' चितधार ॥
वध के अर्थ न हत्या यहाँ । हत्या विरति हुई, व्रत जहाँ ॥
कान, नाक, पूँछादि कटाए । अतिचार हि सो 'छेद' कहाए ॥
बहुत अधिक लादे सामान । सो 'अतिभारारोपण' जान ॥
चारा ठीक समय न खिलाए । 'अन्नहि पान निरोध' कहाए ॥
सो पाँचों ही हैं चितधार । अहिंसाणुव्रत के अतिचार ॥२५॥

ाणु व्रत के अतिचार:-

-मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-कूटलेखनक्रिया-
न्यासापहार-साकारमन्त्रभेदा. ॥२६॥

ा:— 'मिथ्योपदेश', 'रहोभ्याख्यान'।
'लेखन-कूट-क्रिया' त्रय जान॥
चव 'न्यासापहार' चितधार।
पंचम 'मन्त्रभेद-साकार'॥
मो भविजन मन लीजे धार।
हैं सत्याणु व्रतहि अति चार॥२६॥

अहित उपदेश प्रदान। सो 'मिथ्योपदेश' है जान॥
युगल रति करहि बखान। आशय सोइ 'रहोभ्याख्यान'॥
धार पर देय फँसाए। 'लेखन-कूट-क्रिया' कहलाए॥
क धरोहर देवें कम। सो 'न्यासापहार' विभ्रम॥
वश पर बात बताय। 'मन्त्र भेद साकार' कहाए॥२६॥

र्याणुव्रत के अतिचार —

—स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम-
हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥

ः— 'स्तेन-प्रयोग' प्रथम है जान।
दूजा सो 'तदाहृतादान'॥
त्रय 'विरुद्ध-राज्यातिक्रम'।
चोर-बजारी आदिक भ्रम॥
चव 'हीनाधिक मानोन्मान'।
[illegible]

[illegible]

[illegible] ॥३१॥

भाषा — [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
देशविरति व्रत के अतिचार ॥३१॥

[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥३१॥

अनर्थदण्ड विरति-व्रत के अतिचार —

सूत्र — कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोग-परिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥

भाषा:— 'कौत्कुच्य', 'कन्दर्प' बताए ।
अरु तीजा 'मौखर्य' कहाए ॥
'असमीक्ष्याधिकरण' चव अर्थ ।
'उपभोगहि परिभोग अनर्थ' ॥

'कन्दर्प' हि है वचन अशिष्ट । 'कौत्कुच्य' सो क्रिया अशिष्ट ॥
बिना विचारे करे विवाद । सो 'मौखर्य' बहुत बकवाद ॥
बिना प्रयोजन करना काम । 'असमीक्ष्याधिकरण' है नाम ॥
संग्रह करना अधिक निरर्थ । 'उपभोगहि परिभोग अनर्थ' ॥
सो अनर्थ-दण्डहि अतिचार । मन में रखिए भव्य विचार ॥३२॥

सामायिक के अतिचार:—

मूल:—योगदुष्प्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥

भाषा:— सामायिक अतिचार बखान।
काय, वचन, मन 'दुष्प्रणिधान' ॥
चव अतिचार 'अनादर' सोय।
'स्मृत्यनुपस्थापन' पँच होय ॥३३॥

३३वें सूत्र की व्याख्या —

यदि शरीर निश्चल ना होय। बोले मंत्र अशुद्ध हि जोय ॥
सामायिक में चित न रमाय। हो कषाय वश इत-उत जाय ॥
त्रय योगों का दुष्प्रणिधान। शिथिल अशुद्धहिं, चचल ज्ञान ॥
क्रिया समायिक, श्रद्धा नाय। सोइ 'अनादर' है कहलाय ॥
नित्य-क्रियादिक,पाठ भुलाए। 'स्मृत्यनुपस्थापन' कहलाय।
पाँच दोष सो ही विस्तार। सामायिक के हैं अतिचार ॥३३॥

प्रोषधोपवास व्रत के अतिचार:—

मूल:—अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणानादर स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥

भाषा:— बिन देखे, बिन शोधन मान।
मल-मूत्रादि विसर्जन जान ॥
सामग्री, वस्त्रादि उठाय।
आसनादि या देय बिछाय ॥
करे अनादर, क्रिया भुलाए।
उपवासहिं अतिचार बताए ॥३४॥

भूख, प्यास वश आदर नाय। व्रत आवश्यक क्रिया भुलाए ॥
जन्तु न लख सब क्रिया विचार। प्रोषध उपवासहिं अतिचार।३

[illegible]

यथा —

'कोतूहल', 'कामुक' बताए ।
अरु माला 'कोतुक' कहाए ॥
'अगमोंऽप्यधिकरण' यह अर्थ ।
'उरमोंशादि' परिणाम अनर्थ ॥

[illegible]

३६वें सूत्र की व्याख्या:-

रे पत्र पर दे आहार। अथवा ता सों ढके विचार ॥
वय न दे पर दे दिलवाए। सो ही 'परव्यपदेश' कहाय ॥
आदर सहित न देवे दान। ईर्ष्या औरों के प्रति मान ॥
समय मुनि देवे आहार। अतिथि सविभागहि अतिचार ॥३६॥

सल्लेखना के अतिचार:-

मूल:-जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥३७॥

भाषा:— जीवित मरणाशंसा दोय।
मन मित्रहि अनुराग समोय ॥
सुखानुबन्धन और निदान।
सल्लेखन अतिचार बखान ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या:-

एक बार कर ले व्रत धार। फिर भी हो जीवन से प्यार ॥
अतीचार सो पहला होय। जीवन इच्छा कहिए सोय ॥
रोग आदि कष्टहि घबड़ाए। शीघ्र मरण इच्छा मन लाय ॥
सो दूजा अतिचार बखान। 'मरणाशंसा' ता को जान ॥
खेल-कूद के साथी मित्र। पूर्वहि भोगे भोग विचित्र ॥
चिन्तन-सो 'मित्रहि अनुराग'। 'सुखानुबन्ध' सुखो से राग ॥
भोग चाह परलोक हि होय। पँच 'निदान' कहलावे सोय ॥
सो पाँचों मन लीजे धार। सल्लेखना व्रतहि अतिचार ॥३७॥

भोगोपभोग परिमाण व्रत के अतिचार
सूत्र-सचित्तसम्बन्धसम्मिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥३५॥

भाषा — सचित्त' और 'सम्बन्धित' करो।
सचित्त मिश्रित 'अभिषव' होय॥
'अभिषव' और 'दुष्पक्वाहार'।
भो भोगोपभोग अतिचार॥३५॥

[illegible]

[illegible]

अतिथि-संविभाग व्रत के अतिचार —
मूल.-सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥३६॥

भाषा:— सचित 'निक्षेप' तथा 'अपिधान'।
रखे, ढके पत्तों से जान॥
'पर द्रव्यहि से देवे दान'।
या 'मात्सर्य' ताहि में मान॥
असमय 'काल-अतिक्रम' सार।
[illegible]भाग हि अतिचार ॥३६॥

३६वें सूत्र की व्याख्या –

हरे पत्र पर दे आहार । अथवा ता सों ढके विचार ॥
समय न दे पर दे दिखलाए । सो ही 'परव्यपदेश' कहाय ॥
आदर सहित न देवे दान । ईर्ष्या औरों के प्रति मान ॥
असमय मुनि देवे आहार । अतिथि संविभागहि अतिचार ॥३६॥

सल्लेखना के अतिचार:–

मूल:–जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध निदानानि ॥३७॥

भाषा:— जीवित मरणाशंसा दोय ।
मन मित्रहि अनुराग समोय ॥
सुखानुबन्धन और निदान ।
सल्लेखन अतिचार बखान ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या.–

एक बार कर ले व्रत धार । फिर भी हो जीवन से प्यार ॥
अतीचार सो पहला होय । जीवन इच्छा कहिए सोय ॥
रोग आदि कष्टहि घबड़ाए । शीघ्र मरण इच्छा मन लाय ॥
सो दूजा अतिचार बखान । 'मरणाशंसा' ता को जान ॥
खेल-कूद के साथी मित्र । पूर्वहि भोगे भोग विचित्र ॥
चिन्तन सो 'मित्रहि अनुराग' । 'सुखानुबन्ध' सुखों से राग ॥
भोग चाह परलोक हि होय । पंच 'निदान' कहलावे सोय ॥
सो पाँचों मन सोचे पार । सल्लेखना व्रतहि अतिचार ॥३७॥

[illegible]

भावार्थ:— प्रकृति बंध आठ भेद बताए।
'ज्ञान', 'दर्शनावरण' कहाए॥
तीजा 'वेदनीय' है मान।
चौथा 'मोहनीय' ही जान॥
'आयु','नाम'सत'गोत्र' बताय।
'अंतराय' अष्टम दुखदाय॥४॥

'ज्ञानावरण' ढके जो ज्ञान। 'दर्शनावरण'—न हो श्रद्धान॥
'वेदनीय' वश सुख दुख होय। 'मोहनीय' सो, मोहे जोय॥
'आयु'–आयु निर्धारित करे। 'नाम'–वदन, बनावट धरे॥
उच्च, नीच कुल जामें होय। कर्म 'गोत्र' कहलावत सोय॥
दानादिक में विघ्न लगाय। सो ही 'अन्तराय' कहलाय॥
भोजन आदिक को ज्यों खाय। अस्थि, मांस, मल-मूत्र बनाय॥
त्यों ही कर्म प्रकृति बनजाय। अष्ट कर्म येही जिनराय॥४॥

इन आठों कर्मों की उत्तर प्रकृतियां.—

मूल.—पञ्च-नव-द्वयष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-
पञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥५॥

भाषा:— पुनि प्रभेद आठों के कहे।
पँच, नौ, दो, अट्ठाइस लहे॥
चार, बयालिस, दो, पँच मान।
सो प्रभेद हैं क्रमशः जान॥५॥

पहले ज्ञानावरण कर्म के पांच भेद —

मूल:–मति श्रुतावधि-मन: पर्यय केवलानाम् ॥६॥

भाषा:— ज्ञानावरण पांच हैं मान।
मति,श्रुत,अवधि प्रथम त्रय जान॥
मन-पर्यय चव, केवल पंच।
ज्ञानावरण न संशय रंच॥६॥

छठे सूत्र की व्याख्या.—

इन्द्रिय ज्ञान न मन में आए। सो मतिज्ञानावरण कहाए॥
शास्त्र पठन पर भी नहिं ज्ञान। श्रुत ज्ञानावरणहि सो जान॥
भूत-भविष्यत ज्ञान न होय। अवधि-ज्ञान-आवरणहि सोय॥
ज्ञात न हो पर मन की बात। मन पर्यय आवरण कहात॥
पूर्ण ज्ञान जो रोके जोय। केवल ज्ञानावरणहि सोय॥६॥

दूसरे दर्शनावरण कर्म के ९ भेद:–

मूल:–चक्षुरचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-

वेदनीय वश सुख-दुख होय । आयु कर्म भव रोके जीव ॥
अन्य कर्म भी इसी प्रकार । भिन्न-भिन्न फल है निरधार ॥
कर्म स्वभाव प्रकृति सो मान । बन्ध समय हो 'स्थिति' जान ॥
तीव्र, मंद फल शक्ति विचार । सो 'अनुभाग-बंध' निरधार ॥
कर्म प्रकृति अरु आत्म प्रदेश । संख्या मिलि हो बंध विशेष ॥
आत्म, कर्म जल दूध समान । मिल हो 'बंध प्रदेशहिं' जान ॥
तीव्र मन्द जस योग, कषाय । तस बंधों में अन्तर आय ॥
'प्रकृति','प्रदेश'हि योग बनाय । 'स्थिति' अरु 'अनुभाग' कषाय ॥
प्रकृति बंध दो भेद बताय । मूल अरु उत्तर प्रकृति कहाय ॥
मूल प्रकृति के आठ प्रभेद । उत्तर शत-अड़तालिस भेद ॥३॥

मूल प्रकृति बंध के आठ भेद.—

मूल.—आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम-
गोत्रान्तरायाः ॥४॥

भाषा:— प्रकृति बंध अठ भेद बताए ।
'ज्ञान', 'दर्शनावरण' कहाए ॥
तीजा 'वेदनीय' है मान ।
चौथा 'मोहनीय' ही जान ॥
'आयु','नाम'सत'गोत्र' कहाय ।
'अंतराय' अष्टम दुखदाय ॥४॥

'ज्ञानावरण' ढके जो ज्ञान । 'दर्शनावरण'—न हो श्रद्धान ॥
'वेदनीय' वश सुख-दुख होय । 'मोहनीय' सो, मोहे जोय ॥
'आयु'—आयु निर्धारित करे । 'नाम'—वदन, अंगादिक धरे ॥
उच्च, नीच कुल जासो होय । कर्म 'गोत्र' कहलावे सोय ॥
दानादिक में विघ्न लगाय । सो ही 'अन्तराय' कहलाय ॥
भोजन आदिक को ज्यों खाय । अस्थि, माँस, मल-मूत्र बनाय ॥
त्यों ही कर्म प्रकृति अनुसार । अष्ट कर्म बँधते चितधार ॥४॥

इन आठों कर्मों की उत्तर प्रकृतियाँ:—

सूत्र —पञ्च नव-द्वयष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद् द्वि-
पञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥५॥

भाषा:— पुनि प्रभेद आठों के कहे।
पंच, नौ, दो, अट्ठाइस लहे॥
चार, बयालिस, दो, पंच मान।
सो प्रभेद हैं क्रमशः जान॥५॥

पहले ज्ञानावरण कर्म के पाँच भेद —

सूत्र:—मति श्रुतावधि-मन. पर्यय केवलानाम् ॥६॥

भाषा:— ज्ञानावरण पाँच हैं मान।
मति,श्रुत,अवधि प्रथम त्रय जान॥
मन-पर्यय चव, केवल पंच।
ज्ञानावरण न संशय रंच॥६॥

६ठें सूत्र की व्याख्या.—

इन्द्रिय ज्ञान न मन में आए। सो मतिज्ञानावरण कहाए॥
शास्त्र पठन पर भी नहिं ज्ञान। श्रुत ज्ञानावरणहिं सो जान॥
भूत-भविष्यत ज्ञान न होय। अवधि-ज्ञान-आवरणहिं सोय॥
ज्ञान न हो पर मन की बात। मन पर्यय आवरण कहात॥
पूर्ण ज्ञान को रोके जोय। केवल ज्ञानावरणहिं सोय॥६॥

दूसरे दर्शनावरण कर्म के ९ भेद:—

मूल:—चक्षुरचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-
प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥

वेदनीय वश सुख-दुख होय। आयु कर्म भव रोके जीव ॥
अन्य कर्म भी इसी प्रकार। भिन्न-भिन्न फल है निरधार ॥
कर्म स्वभाव प्रकृति सो मान। बन्ध समय हो 'स्थिति' जान ॥
तीव्र, मंद फल शक्ति विचार। सो 'अनुभाग-बंध' चितधार ॥
कर्म प्रकृति अरु आत्म प्रदेश। संख्या मिलि हो बंध विशेष ॥
आत्म, कर्म जल दूध समान। मिल हो 'बंध प्रदेशहिं' जान ॥
तीव्र मन्द जस योग, कषाय। तस बंधों में अन्तर आय ॥
'प्रकृति','प्रदेश'हिं योग बनाय। 'स्थिति' अरु 'अनुभाग' कषाय ॥
प्रकृति बंध दो भेद बनाय। मूल अरु उत्तर प्रकृति कहाय ॥
मूल प्रकृति के आठ प्रभेद। उत्तर शत-अड़तालिस भेद ॥३॥

मूल प्रकृति बंध के आठ भेद —

मूलः—आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम-
गोत्रान्तरायाः ॥४॥

भाषाः— प्रकृति बंध आठ भेद बताए।
'ज्ञान', 'दर्शनावरण' कहाए ॥
तीजा 'वेदनीय' है मान।
चौथा 'मोहनीय' ही जान ॥
'आयु','नाम'सत'गोत्र' कहाय।
'अंतराय' अष्टम दुखदाय ॥४॥

'ज्ञानावरण' ढके जो ज्ञान। 'दर्शनावरण'—न हो श्रद्धान ॥
'वेदनीय' वश सुख-दुख होय। 'मोहनीय' सो, मोहे जीव ॥
'आयु'—आयु निर्धारित करे। 'नाम'—वदन, अंगादिक धरे ॥
उच्च, नीच कुल जासो होय। कर्म 'गोत्र' कहलावे सोय ॥
दानादिक में विघ्न लगाय। सो ही 'अन्तराय' कहलाय ॥
भोजन आदिक को ज्यों खाय। अस्थि, माँस, मल-मूत्र बनाय ॥
त्यों ही कर्म प्रकृति अनुसार। अष्ट कर्म बँधते चितधार ॥४॥

ौथे कर्म मोहनीय के २८ भेदः—

ूत्र.—दर्शन-चारित्रमोहनीयाकषाय-कषायवेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषाय-कषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुं-नपुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोध मान-माया लोभा ॥१०॥

:— मोहनीय के गुनिए मित्र।
मुख्य भेद दर्शन, चारित्र ॥
दर्शन मोहनीय त्रय जान।
भेद प्रथम 'सम्यक्त्व' बखान ॥
दूजा सो 'मिथ्यात्व' बताए।
त्रय 'सम्यक-मिथ्यात्व' कहाए ॥
चारित मोहनीय दो मान।
'नो-कषाय-वेदन' नौ जान ॥
हास्य, अरति, रति, शोक बखान।
भय, पुनि षष्ट जुगुप्सा जान ॥
स्त्री-पुरुष-नपुंसक वेद ॥
'वेदनीय अकषाय'हि भेद ॥
दूजा 'वेदनीय सकषाय'।
ता के सोलह भेद बताय ॥
क्रोध, मान, माया अरु लोभ।
अनन्तानुबन्धी चव क्षोभ ॥

[illegible] — [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥७॥

[illegible] —

[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥७॥

तीसरे कर्म वेदनीय के २ भेद —

मूल:—[illegible] ॥८॥

:— वेदनीय दो भेद बखान ।
साता और असाता जान ॥
सुखानुभव हो 'साता' काज ।
दुखानुभूति 'असाता' राज ॥८॥

आगे कर्म मोहनीय के २८ भेद.—

सूत्र—दर्शन-चारित्रमोहनीयाकषाय-कषायवेदनीयाख्या-
स्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्य-
कषाय-कषायौ हास्य रत्यरति-शोक भय जुगुप्सा-
स्त्री-पुं-नपुंसक वेदाः अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-
प्रत्याख्यान-संज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोध मान-
माया लोभा ॥१०॥

:— मोहनीय के पुनिए भित्र।
मुख्य भेद दर्शन, चारित्र॥
दर्शन मोहनीय त्रय जान।
भेद प्रथम 'सम्यक्त्व' बखान॥
दूजा भी 'मिथ्यात्व' बताए।
त्रय 'सम्यक्-मिथ्यात्व' कहाए॥
चारित मोहनीय द्वो मान।
'नो-कषाय-वेदन' भी जान॥
हास्य, अरति, रति, शोक बखान।
भय, पुनि षष्ट जुगुप्सा जान॥
स्त्री-पुरुष-नपुंसक वेद॥
'वेदनीय अकषाय'हि भेद॥
दूजा 'वेदनीय सकषाय'।
ता के सोलह भेद बताय।
क्रोध, मान, माया अरु ...

चार 'अप्रत्याख्यानावरण' ।
पुनि चार 'प्रत्याख्यानावरण' ॥
चारौ पुनि 'संज्वलन' कषाय ।
मोहनीय अट्ठाइस भाय ॥६॥

[illegible] की व्याख्या

[illegible] । [illegible] 'मिथ्यात्व' बखान ।
[illegible] । [illegible] 'मिथ्यात्व' [illegible] ।
[illegible] । [illegible] बखान ।
'हास्य' 'रति', 'अरति' 'शोक' बखान । [illegible] ॥
[illegible] जुगुप्सा [illegible] । [illegible] ॥
[illegible] अपार । [illegible] वेदनीय [illegible] ॥
[illegible] । [illegible] ॥
ता सों युक्त कषाय चार । अनन्तानुबन्धी निरधार ॥
जा कर किंचित नहिं संयम धरण । सो अप्रत्याख्यानावरण ॥
जा बस पूर्ण न संयम होय । 'प्रत्याख्यानावरण' हि सोय ॥
संयम के संग जलती जाय । सो ही है 'संज्वलन' कषाय ॥
हास्यादिक तें ही बल पाय । नो कषाय है तनिक कषाय ॥
कुत्ता स्वामी-बल इतराय । ता हि इशारे पर दब जाय ॥
सो कषाय भी मोह समान । बिन कषाय के निर्बल जान ॥
सबमें अधिक प्रथम बलवान । दूजी होय अधिक बलवान ॥
सब कषाय बलवान कहाय । क्रमशः सब बलहीन कषाय ॥
चारित मोह के भेद पचीस । दर्श मोह मिल अट्ठाईस ॥९॥

पाँचवें आयु कर्म के ४ भेदः—

मूलः—नारक-तैर्यग्योन-मानुष्य-दैवानि ॥१०॥

भाषाः— आयु कर्म चव भेद बताए।
नारक अरु तिर्यञ्च कहाए॥
मानुष्यायु तीजा, चव देव।
सो कर्मानुसार गुन सेव॥१०॥

१०वें सूत्र की व्याख्याः—

होने पर जीवित कहलाए। अरु अभाव में मृत्यु बताए॥
भव धारण में कारण जोय। भविजन 'आयु' कहावे सोय॥
आयु कर्म वश गतियाँ चार। निश्चित होवें उक्त प्रकार॥१०॥

छठे नाम कर्म की ४२ प्रकृतियाः—

मूल.—गति-जाति-शरीराङ्गोपाङ्ग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघात-परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येक शरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ सूक्ष्म-पर्याप्ति स्थिरादेय-यशः कीर्ति-सेतराणि तीर्थंकरत्व च ॥११॥

भाषाः— नाम कर्म हैं ब्यालिस मान।
'गति' पुनि 'जाति', 'शरीर' बखान॥
'अंगोपांग' तथा 'निर्माण'।
'बंधन', 'संघातहिं', 'संस्थान'॥
'संहनन', 'स्पर्शहिं', 'रस', 'गंध'।
'वर्ण', 'आनुपूर्व्य' हि हैं बंध॥
पुनः 'अगुरुलघु' अरु 'उपघात'।

६ठे सूत्र की व्याख्या:—

दशो धर्म का उच्च स्वरूप। उत्तम सहित गुहाए अनूप॥
क्रोध काज पर 'क्षमा' प्रदान। गर्व हीनता 'मार्दव' जान॥
मन-वच-काय कुटिलता तजे। सो ही 'आर्जव' गुण मे सजे॥
'शौच' कहावे लोभ अभाव। सुन्दर 'सत्य' वचन मुख लाव॥
राग हीनता संयम जान। इन्द्रिय, प्राणि भेद दो मान॥
व्रत उपवासहि'तप' बतलाए। तजे परिग्रह 'त्याग' कहाए॥
शरीरादि मे ममता नाय। सो 'आकिंचन' धर्म कहाय॥
स्त्री-विषय आदि में राग। 'ब्रह्मचर्य' मे इनका त्याग॥६॥

बारह अनुप्रेक्षा (भावना):—

मूल:—अनित्याशरण-ससारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रव-संवर-निर्जरा-
लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यात-तत्वानुचिन्तन-मनुप्रेक्षा।७।

भाषा:— बारह अनुप्रेक्षा चितधार।
सो 'अनित्य','अशरण', 'संसार'॥
'एकत्व'हि 'अन्यत्व' बताय।
मायहि 'अशुचि' घृणित है काय॥
'आस्रव', 'संवर' अरु 'निर्जरा'।
'लोक', 'बोधिदुर्लभ' है धरा॥
'धर्म हि स्वाख्यातत्व' बखान।
भावनाएं संवर हित जान॥७॥

७वें सूत्र की व्याख्या.—

बारह अनुप्रेक्षा विख्यात। मनहि भावना हो दिन रात॥

मूल:—एकादश जिने ॥११॥

भाषा:— सहें परीषह जिन भगवान।
अधिकाधिक ग्यारह ही जान॥११॥

११वें सूत्र की व्याख्या:—

चार घातिया कर्म अभाव। वेदनीय का कुछ सद्‌भाव॥
ग्यारह परिषह संभव जान। अधिकाधिक तेरह गुणथान॥
भूख, प्यास अरु गर्मी, शीत। 'दंश-मसक' अरु 'चर्या' मीत॥
शय्या, वध, मल, रोग बखान। 'तृण-स्पर्श' सब ग्यारह जान॥
मोहनीय का उदय न होय। शक्तिहीन हैं परिषह सोय॥
वेदनीय कुछ उदय विचार। कही परीषह सो उपचार॥
शक्तिहीन विष के सम जान। कहने ही भर को सो मान॥११॥

मूल:—बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥

भाषा:— बादर साम्पराय गुणथान।
छट से ले कर नौ तक जान॥
स्थूल कषाय सहित हैं सोय।
सभी परीषह इनमें होंय॥१२॥

किस कर्म के उदय से कौन सी परीषह होती हैं (१६वें सूत्र तक):—

मूल.—ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥

भाषा:— ज्ञानावरण कर्म से मान।
परिषह 'प्रज्ञा' अरु अज्ञान॥१३॥

१३वें सूत्र की व्याख्या:—

निज पांडित्य गर्व नहिं होय। 'प्रज्ञा' परिषह जीते सोय॥
अज्ञानी कह, दे धिक्कार। मन में तनिक न होय विचार॥
ज्ञान प्राप्ति में ही दे ध्यान। जयी परीषह सो अज्ञान॥१३॥

भाषा –

बाह्य तपहिं षट भेद बताए।
'अनशन','अवमौदर्य' कहाए॥
तीजा 'वृत्तिपरीसंख्यान'।
चौथा 'रसपरित्याग' बखान॥
पँच 'विविक्त शय्यासन' रहा।
'काय क्लेश'तप अंतिम कहा॥१६॥

१९वें सूत्र की व्याख्या –

मुख्य भेद तप के दो मान। 'बाह्य' और 'अभ्यतर' जान॥
पुनि षट भेद प्रत्येक विचार। सो कहते सुनिए चितधार॥
यश धनादि फल चाह न जान। संयम सिद्धि हेतु ही मान॥
भोजनादि को त्यागे जोय। 'अनशन' तप को पाले सोय॥
ताहि हेतु ले अल्पाहार। 'अवमौदर्य' तपहिं चितधार॥
मुनि आहार-नियम मन ठान। सो तप 'वृत्तिपरीसंख्यान'॥
दूध दही, घी, मीठा, तेल। नमक त्याग रस परिषह झेल॥
दमन करे रसना जो कोय। 'रस परित्याग' करे तप सोय॥
ब्रह्मचर्य साधन, स्वाध्याय। जतु विहीन जगह में जाय॥
आसनादि एकान्त-स्थान। सो 'विविक्त शय्यासन' जान॥
वृक्ष तले गर्मी में जाए। शीत खुले में ध्यान लगाए॥
कष्ट सहन का हो अभ्यास। 'काय क्लेश'तप कठिन प्रयास॥
बाह्य क्रिया जानें सब कोय। कहे बाह्य तप ताते सोय॥
काय क्लेश'सुद साधा जाए। 'परिषह'सोइ अचानक आए॥१९॥

श्रुत केवली सहैं पुनि मान ।
धर्म,आदि शुक्लहि दो ध्यान ॥३७॥

३७वें सूत्र की व्याख्या:—

चौदह पूर्वहि ज्ञाता जोय । श्रुत केवली कहावे सोय ॥
अष्टम से द्वादश गुणथान । होते आदि शुक्ल दो ध्यान ॥
चढ़ते समय श्रेणि हो 'धर्म' । ध्यान बाद में शुक्लहि मर्म ॥
शुक्ल ध्यान चव भेद बखान । किया सूत्र उल्लासित जान ॥३७॥

सूत्र.—परे केवलिनः ॥३८॥

भाषा:— शेष शुक्ल दो करहिं प्रयोग ।
सो केवली सयोग, अयोग ॥३८॥

३८वें सूत्र की व्याख्या:—

मुनि जो हैं तेरह गुणथान । तिन्हें सयोग केवली जान ॥
जो चौदह गुणथान हि जाएँ । सो अयोग केवली कहाएँ ॥३८॥

शुक्ल ध्यान के भेद—

मूल —पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरतक्रिया-
निवर्तीनि ॥३९॥

भाषा.— शुक्ल ध्यान चव भेद बताए ।
इक 'पृथकत्ववितर्क' कहाए ॥
पुनि 'एकत्व वितर्क' बखान ।
'सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति' हि जान॥
'व्युपरत क्रियानिवर्ति' हि अंत ।
लक्षण नाम समान लहंत ॥३९॥

संयत रौद्र ध्यान नहिं मान । रौद्र साथ नहिं संय
यतिहि कृष्ण, नील, कापोत । जिनकी लेश्या तिनकं
तप्त लोह ज्यों जल सोसाय । रौद्र ध्यान त्यों कर्म सिच

धर्म ध्यान का स्वरूप:—

मूल:—आज्ञापाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ॥३६।

भाषा — धर्म ध्यान चव भेद बताय ।
प्रथम 'आज्ञा' और 'अपाय' ॥
त्रय 'विपाक' चौथा 'संस्थान' ।
सो विचार या विचय बखान ॥३६॥

३६वें सूत्र की व्याख्या.—

मंद बुद्धि, सद्गुरु हि अभाव । सूक्ष्म युक्ति वश ग्रहण न भाव ॥
तब आगम जो तत्व बताय । 'आज्ञा' सो श्रद्धान कहाय ॥
अथवा स्वय होय गुणवान । दे औरों को कैसे ज्ञान ॥
चिन्तन सो, जिनधर्म प्रचार । 'आज्ञा विचय' सभी चितधार ॥
मिथ्या दर्शन-ज्ञान-चरित्र । स्व, पर दूर हों कैसे मित्र ॥
कैसे अघ छूटें संसार । चिन्तन सोइ 'अपाय' विचार ॥
भिन्न-भिन्न जो है गुणथान । कर्म-बंध किन में किन जान ॥
कर्म निर्जरा कैसे होय । ध्यान 'विपाक' कहावे सोय ॥
त्रिभुवन-जग स्वभाव,आकार । सो 'संस्थान विचय' चितधार ॥
धर्म ध्यान अधिकारी जान । चव,पंच,षट,सप्तम गुणथान ॥३६॥

शुक्ल ध्यान के स्वामी:—

सूत्र:—शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥

अब कर्मों की स्थिति जान । सो प्रकार हो आयु समान ॥
जहँ समय भी होवे ध्यान । 'सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति' बखान ॥
पश्चात् ध्यान पुनि शुक्ल कराए । 'व्युपरत क्रिया-निवर्ति' कहाए ॥
श्वासोच्छ्वास तथा सब योग । होवें न किंचित मात्र प्रयोग ॥
हलन-चलन सब ही रुक जाए । आस्रव बंध सकल नशाए ॥
सकल निर्जरा ऐसा होय । कहें अयोग-केवली सोय ॥
ध्यान अग्नि में कर्म जलाए । आत्म शुद्ध कंचन बन जाए ॥
स्वाभाविक गुण आतम जान । तब पावे निर्वाण महान ॥४४॥

सम्यग्दृष्टियों के असमान निर्जरा—

सूत्रः—सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्तवियोजक-दर्शनमोह-
क्षपकोपशमकोपशान्तमोह-क्षपक-क्षीणमोह-जिनाः
क्रमशोऽसंख्येय-गुणनिर्जराः ॥४५॥

भाषाः— 'सम्यकदृष्टी' 'श्रावक' मान ।
'विरत', 'अनन्तवियोजक' आन ॥
'दर्शनमोह क्षपक', 'उपशमक' ।
पुनि 'उपशांत मोह' अरु 'क्षपक' ॥
'क्षीण मोह', 'जिन' जो निर्जरा ।
असंख्यात गुन क्रमशः करा ॥४५॥

४५वें सूत्र की व्याख्या:—

कर्म निर्जरा ऐसे जान । सब में होती नहीं समान ॥
दस स्थान विशुद्धि निर्जरा । असंख्यात गुन क्रमशः करा ॥
'अविरत सम्यग्दृष्टी' आन । पहले है चौथे गुणस्थान ॥

सीधा वदन, खुले अध नैन । स्वासोछ्वास मंद सुख
मस्तक उर या नाभि प्रदेश । धर कर मन एकाग्र वि
दांत मिले, मुख स्मिति होय । ध्यान मुमुक्षु बताया सं
सप्तम से अष्टम गुणथान । द्रव्य, भाव परमाणू ध्या
सोइ समय होवे वीचार । ध्येय, वचन, योगहि चितधार
मोहनीय क्षय, उपशम हेतु । सो 'पृथक्त्व वितर्क'हि सेतु

मोहनीय के क्षय हित जान । सो ध्याता मन निश्चय ठान ॥
दूर हटा तीनों वीचार । शुद्ध अनन्तगुणा चितधार ॥
मन थिर कर द्वादस गुणथान । पीछे पुन. न हटता जान ॥
घाति-कर्म ध्यान-अग्नि जलाय । सो 'एकत्व-वितर्क' कहाय ॥

कर्म पटल हट, सूर्य समान । केवल ज्ञान प्रकट हो जान ॥
पा तब पद केवलि, अर्हन्त । करें विहार आयु पर्यन्त ॥
वेद, नाम, गोत्र, आयु बताय । अन्तर्मुहूर्त शेष रह जाय ॥
तजे वचन, मन, बादर-काय । सूक्ष्म काय योगहि रह जाय ॥
ताहि समय जो होवे ध्यान । 'सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति' बखान ॥
अन्तर्मुहूर्त आयु हो शेष । नय कर्मन थिति अधिक विशेष ॥
समुद्घात करने मुनि मान । आठ समय लगने हैं जान ॥
आत्म प्रदेशहि दण्डाकार । प्रथम समय फैलाएँ विचार ॥
पुनि कपाट आकार बनाएँ । तीजे प्रतर रूप फैलाएँ ॥
चौथे समय करें विस्तार । आत्मप्रदेशहि लोकाकार ॥
सो ही क्रम से घटते आएँ । अष्टम समय शरीर समाएँ ॥

सब कर्मों की स्थिति जान । सो प्रकार हो आयु समान ॥
शाहि समय जो होवे ध्यान । 'सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति' बखान ॥
पश्चाहि ध्यान पुनि सुक्त कराए । 'व्युपरत क्रिया-निवर्ति' कहाए ॥
श्वासोच्छ्वास तथा सब योग । होवें न किंचित मात्र प्रयोग ॥
हलन-चलन सब हो रुक जाए । आतम पद समरस लगाए ॥
सर्वाधिक निर्जरा ऐसा होय । कहें अयोग-केवली सोय ॥
ध्यान अग्नि में कर्म जलाए । आतम शुद्ध कंचन बन जाए ॥
रत्नत्रय पूर आतम जान । तब पावे निर्वाण महान ॥४४॥

सम्यग्दृष्टियों के असमान निर्जरा —

सूत्र:—सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्तवियोजक दर्शनमोह-
क्षपकोपशमकोपशान्तमोह-क्षपक-क्षीणमोह-जिना-
क्रमशोऽसंख्येय-गुणनिर्जराः ॥४५॥

भाषा:— 'सम्यक्दृष्टी' 'श्रावक' मान ।
'विरत', 'अनन्तवियोजक' जान ॥
'दर्शनमोह क्षपक', 'उपशामक' ।
पुनि 'उपशांत मोह' अरु 'क्षपक' ॥
'क्षीण मोह', 'जिन' की निर्जरा ।
असंख्यात गुन क्रमशः करा ॥४५॥

४५वें सूत्र की व्याख्या—

कर्म निर्जरा सीजे जान । सब में होती नहीं समान ॥
दस स्थान विशुद्धि निर्जरा । असंख्यात गुन क्रमशः करा ॥
'अविरत सम्यग्दृष्टी' जान । पहले से चौथे गुणथान ॥

'श्रावक' अणुव्रत सहित कहाए। पंचम गुणस्थान बतलाए॥
'विरत' महामुनि कहिए सोय। गुणस्थान षट, सप्तम जोय॥
अनन्तानुबन्धी नहिं जोय। सोइ 'अनन्त वियोजक' होय॥
दर्श-मोह सम्पूर्ण नसाए। 'दर्शन मोह क्षपक' कहलाए॥
साधु 'उपशमक' होते जान। अठ, नौ और दसम गुणथान॥
चारित-मोह नसावे जान। 'उपशान्त'हि ग्यारह गुणथान॥
श्रेणि 'क्षपक' आरोही सोय। चारित-मोह तनिक नहिं जोय॥
सो भी अठ, नौ, दस गुणथान। उपशम, नाश भेद है जान॥
'क्षीण-मोह' द्वादस गुणथान। चारित-मोह न नाम निशान॥
घार घातिया पूर्ण नसाए। 'जिन' तेरह गुणथान कहाए॥
चव से ले आगे गुणथान। अधिकाधिक विशुद्धि बखान॥
असंख्यात गुन कर्म नसाए। क्रम आगे-आगे ज्यों जाए॥४५॥

निर्ग्रन्थों के भेद :—

मूल :–पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः॥४६॥

भाषा :– निर्ग्रन्थहिं पँच भेद बताए।
प्रथम 'पुलाक', 'वकुश' कहलाए॥
अथ 'कुशील', 'निर्ग्रन्थहिं' चार।
'स्नातक' हो पंचम चितधार॥४६॥

४६ वें सूत्र की व्याख्या :–

उत्तर गुण से कोरे निरे। मूल गुणों में जब तब गिरे॥
बिना पके जो धान समान। सो 'पुलाक' कहलाते जान॥
मूल गुणों को पावें जोय। दिखें सुदर्शन इच्छा होय॥

...नमी निर्ग्रंथ आगार । निज उपशमहिं मोह विचार ॥
...सि दस दृष्टा सा जात । शुद्धि शक्ति में करहिं उपाय ॥
...पुनि 'बकुश' मनमिलनि कार । पट शरीर रखो परदेदार ॥
...कुशील' में भेद बखान । 'प्रतिसेवना', 'कषाय' कहान ॥
...मूल-उत्तर गुण जान । अब-अब उनमें दोष लगान ॥
...'प्रतिसेवना' कहावें सोय । संज्वलन करण प्रतिसेवन होय ॥
...उपशम क्षयहिं मन किया । नाम कषाय कुशील'हि दिया ॥
...मोह का उदय न मान । पानि मध्य जल रेख समान ॥
...ज्ञान निकट ही होय । मुनि 'निर्ग्रन्थ' कहावें सोय ॥
...या सो 'निर्ग्रन्थ' बखान । जो ग्यारह, बारह गुणथान ॥
...ह अरु चौदह गुणथान । के मुनि हैं सर्वज्ञ समान ॥
...-कर्म सब ही विनशाएँ । सो केवलि 'स्नातक' कहलाएँ ॥
...अधिकता ही चारित्र । सब निर्ग्रन्थ मित्र ॥
...हिं परिग्रह अगर-चार । सम्यग्दृष्टी सभी कहाय ॥४६॥

...क आदि मुनियों की अन्य विशेषताएँ —

...:— संयम-श्रुत-प्रतिसेवना—तीर्थ-लिङ्ग—लेश्योपपाद—स्थान-विकल्पतः साध्याः ॥४७॥

...या :— निर्ग्रन्थादि मुनिन में मान ।
निम्न अपेक्षा अंतर जान ॥
'संयम', 'श्रुत' में अंतर लहैं ।
'प्रतिसेवना', 'तीर्थ' पुनि कहैं ॥
'लिंग' हि 'लेश्या' अंतर जान ।
'उपपाद' हि अरु भेद 'स्थान' ॥४७॥

तत्वार्थ सूत्र

का

पारिभाषिक शब्द संकेत

* इस कोष में पहले अंक पृष्ठ के और दूसरे अंक पंक्ति के सूचक हैं।

ह

प्रतीक्षा कीजिए !   छप रहा है   प्रतीक्षा कीजिए !!

[श्री नन्द किशोर जैन, एम० ए० लिखित]

प्रज्वलित प्रश्न

सामाजिक कुरीतियों एवं समस्याओं का दिग्दर्शक ड्रामा

इसमें केवल समस्यायें ही नहीं, उनके अनूठे तथा नवीन परन्तु फलप्रद समाधान भी हैं।

छुआछूत, धर्म के बाह्याडम्बर, अज्ञान, अशिक्षा, दहेज, विधवा-विवाह, बालापन, प्रेम विवाह, धर्म एवं काम शिक्षा, विवाहपूर्व *तथा विवाहेतर काम सम्बन्ध, बिगड़े युवक-युवतियां, फैशन आदि* अनेक समस्याओं के सम्बन्ध में नये दृष्टिकोणों से विचार !!

यह प्रेरणाप्रद ड्रामा जो दिनांक १२-२-७० को जैनबाग, डालीगंज, लखनऊ में सफल हो चुका है, अपने परिवर्धित तथा संशोधित रूप में प्रकाशनाधीन है। अभी से अपनी प्रति सुरक्षित करा लें।

एक नवाबथिक क्रूर सास, सुशिक्षित बहू, विधवा पुत्री, फैशन के पीछे दीवाने युवक-युवतियों की रोचक गाथा।

इसे पढ़कर आप कुछ सोचने के लिए विवश हों आनन्दित तथा बरबस आपके मुँह से निकल पड़ेगा :— 'हाँ, ठीक तो है।'
